मूल्य: १०.०० रूपया

तित्थयर

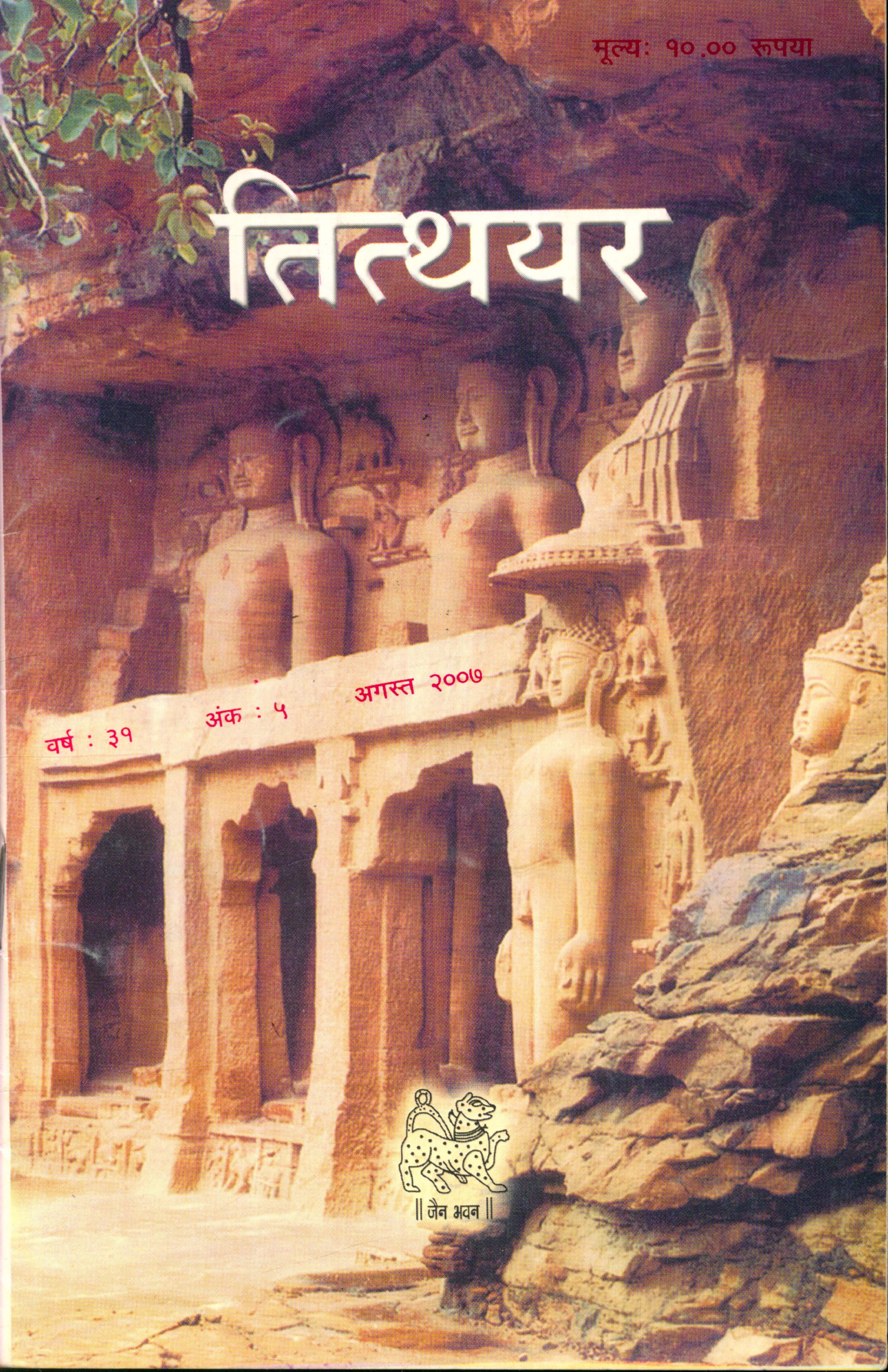

वर्ष : ३१ अंक : ५ अगस्त २००७

॥ जैन भवन ॥

ज्ञान से पदार्थों को जाना जाता है,
दर्शन से श्रद्धा होती है,
चारित्र से कमास्रव की रोक होती है,
और तप से शुद्धि होती है।

Sethia Oil Industries Ltd.

Manufacturers of De-oiled Rice Bran, Mustard Deoiled Cakes, Neem deoiled Powder, Groundnut De-oiled Cakes, Mahua deoiled cakes etc. And Solvent Extracted Rice Bran Oil, Neem Oil, Mustard Oil etc.

Plant:
Post Box No.5
Lucknow Road
Sitapur-2261001 (U.P.)
Ph : 242017/42397/
42073 (05862)
Gram - Sethia- Sitapur
Fax : 242790 (05862)

Registered Office:
143, Cotton Street
Kolkata - 700 007
Ph : 2238-4329/
8471/5738
Gram - Sethia Meal

Executive Office:
2, India Exchange Place
Kolkata - 700 001
Ph : 22201001/9146/5055
Telex : 217149 SOIN IN
FAX : 22200248 (033)

तित्थयर

श्रमण संस्कृति मूलक मासिक पत्रिका

वर्ष - ३१ अंक - ५ अगस्त २००७

लेख, पुस्तक समीक्षा तथा पत्रिका से सम्बन्धित पत्र व्यवहार के लिये
पता – Editor : Titthayar, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Phone : 2268-2655,

विज्ञापन तथा सदस्यता के लिये कृपया सम्पर्क करें —
Secretary, Jain Bhawan, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Subscription for one year : Rs. 100.00, US$ 20.00,
for three years : Rs. 300.00, US$ 60.00,
Life Membership : India : Rs. 1000.00, Foreign : US$ 160.00

Published by Smt. Lata Bothra on behalf of Jain Bhawan from
P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone : 2268-2655
and Printed by her at Arunima Printing Works, 81, Simla Street
Kolkata - 700 007 Phone : 2241-1006

संपादन
डॉ. लता बोथरा,

॥ जैन भवन ॥

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	लेख	लेखक	पृ. सं.
१.	वाचक उमास्वाति का सभाष्य तत्त्वार्थसूत्र और उनका सम्प्रदाय	पं. नाथूरामजी प्रेमी	२१५
२.	श्रीकीर्तिरत्नसूरि रचित- नेमिनाथ महाकाव्य	प्रो. सत्यव्रत 'तृषित'	२२५
३.	सिंहल की राजकन्या **(सुदर्शना)**	आचार्यश्री विजयविशालसेनसूरिजी म. सा.	२३२

मूल्य - १०.०० रूपये

कवरपृष्ठ : गोपाचल पर्वत (ग्वालियर) में स्थित प्राचीन तीर्थंकर मूर्तियाँ

Composed by:

Jain Bhawan Computer Centre, P-25, Kalakar Street Kolkata - 700 007

वाचक उमास्वाति का सभाष्य तत्त्वार्थसूत्र और उनका सम्प्रदाय

पं. नाथूरामजी प्रेमी

गुर्वावली, पट्टावली और शिलालेखों आदि के पूर्वोक्त उल्लेखों से मालूम होता है कि उनके रचयिताओं को उमास्वाति की गुरुपरम्परा का, नामका और समय का कोई स्पष्ट ज्ञान नहीं था और इसीलिए उनमें परस्पर मतभेद और गड़बड़ है। पूर्वोक्त शिलालेखों में कोई भी श. सं. १०३७ (वि. सं. ११७२) से पहले का नहीं है और गुर्वावली-पट्टावली तो शायद उनके भी बहुत बाद की हैं। जिस समय टीका-ग्रन्थों के द्वारा उमास्वाति दिगम्बर सम्प्रदाय के आचार्य मान लिये गये, और उनको कहीं न कहीं दिगम्बरपरम्परा में बिठा देना लाजिमी हो गया, उस समय के बाद की ही उक्त पट्टावलियों शिलालेखों आदि की सृष्टि है। विभिन्न समयों के लेखकों द्वारा लिखे जाने के कारण उनमें एकवाक्यता नहीं रह सकी।

श्वेताम्बर-परम्परा की जाँच : लगभग यही हालत श्वेताम्बर सम्प्रदाय की पट्टावलियों आदि की भी है। उनमें सबसे प्राचीन कल्पसूत्र-स्थविरावली और नन्दिसूत्र-पट्टावली हैं जो वीर नि० सं० ९८० (वि० सं० ५१०) में संकलित की गई थी[१]। उमास्वाति के विषय में इतना तो निश्चित है कि वे वि० सं० ५१० के पहले हो चुके थे। फिर भी उनमें उमास्वाति का नाम नहीं है। नन्दिसूत्र-पट्टावली में वाचनाचार्यों की सूची दी हुई है परन्तु उसमें भी उमास्वाति या उनके गुरु शिवश्री, मुण्डपाद, मूल आदि किसी भी वाचक का नाम नहीं है।

पिछले समय की रची हुई जो अनेक श्वे० पट्टावलियाँ है उनमें अवश्य उमास्वाति का नाम आता है, परन्तु एकवाक्यताका वहाँ भी अभाव है।

दु:षमाकाल-श्रमणसंघस्तोत्र (वि० की तेरहवीं सदी) में हरिभद्र और जिनभद्र गणि के बाद उमास्वाति को लिखा है जब कि स्वयं हरिभद्र तत्त्वार्थभाष्य

---

१. कल्पसूत्र ग्रन्थविरावली

के टीकाकार हैं और जिनभद्रगणि ने अपना विशेषावश्यक भाष्य वि० सं० ६६० में समाप्त किया था।

धर्मसागर उपाध्यायकृत तपागच्छ पट्टावली (वि० सं० १६४६) में जिनभद्र के बाद विबुधप्रभ, जयानन्द और रविप्रभ के बाद उमास्वाति को युगप्रधान बतलाया है और समय वि० सं० ७२०। फिर उनके बाद यशोदेव का नाम है। इसके विरुद्ध देवविमल की महावीर-पट्टपरम्परा (वि० सं० १६५६) में रविप्रभ और यशोदेव के बीच उमास्वाति का नाम ही नहीं है और न आगे कहीं है।

विनय विजय गणि ने अपने लोकप्रकाश (वि० सं० १७०८) में उमास्वाति को ग्यारहवाँ युगप्रधान बतलाया है जो जिनभद्र के बाद और पुष्यमित्र के पहले हुए।

रविवर्द्धन गणि ने (वि० सं० १७३९) पट्टावली सारोद्धार में उमास्वाति को युगप्रधान कहकर उनका समय वीर नि० सं० ११९० लिखा है। उनके बाद वे जिनभद्र को बतलाते हैं जब कि धर्मघोषसूरि उमास्वाति को जिनभद्र के बाद रखते हैं।

धर्मसागर ने तो अपनी त० पट्टावली (सटीक) में दो उमास्वाति खड़ेकर दिये हैं, एक तो वि० सं० ७२० में रविप्रभ के बाद होने वाले जिनका जिक्र ऊपर हो चुका है और दूसरे आर्यमहागिरि के बहुल और बलिस्सह नामक दो शिष्यों में से बलिस्सह के शिष्य, जिनका समय वीर नि० ३७६ से कुछ पहले पड़ता है और उन्हें ही तत्त्वार्थादिका कर्त्ता अनुमान कर लिया है।

नन्दिसूत्र-पट्टावली की २६ वीं गाथा में हारियगुत्तं साइं च वन्दे (हारीतगोत्रं स्वातिं च वन्दे) पद है। चूँकि उमा-स्वाति नाम का उत्तरार्धस्वाति है इसलिये धर्मसागरजी ने स्वाति को ही उमास्वाति समझ लिया और यह सोचने का कष्ट नहीं उठाया कि तत्त्वार्थकर्त्ता उमास्वाति का गोत्र तो कौमीषणि है और स्वाति का हारीत। इसके सिवाय दोनों के गुरु भी दूसरे दूसरे हैं।

---

१. मैसूर के नगर तालुके का ४६ वें नम्बर का शिलालेख। एपिग्राफिआ कर्नाटिका की आठवीं जिल्द।

३.१.१८.

गरज यह कि श्वेताम्बर सम्प्रदाय के लेखक भी उमास्वाति की परम्परा और समय आदि के सम्बन्ध में अँधेरे में थे। उन्होंने भी बहुत पीछे उन्हें अपनी परम्परा में कहीं न कहीं बिठाने का प्रयत्न किया है और उसमें वे सफल नहीं हुए हैं।

हमारी समझ में तत्त्वार्थ-सूत्र और भाष्य के कर्त्ता पहले तो दोनों सम्प्रदायों के लिये अन्य थे परन्तु पीछे जब अपनी टीकाओं के बलपर उनको आत्मसात् कर लिया गया तब पीछे के लेखकों को उन्हें अपनी अपनी परम्परा में स्थान देने को विवश होना पड़ा, जिसमें एकवाक्यता न रही और यह गड़बड़ मच गई।

उमास्वाति यापनीय थे : तब उमास्वाति किस सम्प्रदाय के थे? सबसे पहले मुझे एक शिलालेख[१] के नीचे लिखे हुए श्लोक से उनके सम्प्रदाय का आभास मिला—

तत्त्वार्थसूत्रकर्त्तारं उमास्वातिमुनीश्वरम्।
श्रुतकेवलिदेशीयं वन्दऽहं गुणमन्दिरम्।।

इसमें उमास्वाति को 'श्रुतकेवलिदेशीय' विशेषण दिया गया है और यहीं विशेषण व्याकरणाचार्य शाकटायन के साथ लगा हुआ मिलता है साथ ही इसी शिला लेख में शाकटायन की भी स्तुति की गई है।

यापनीय सम्प्रदाय का अब केवल नाम ही रह गया है, सम्प्रदाय के रूप में उसका अस्तित्व नहीं है। हाँ, उसका थोड़ा सा साहित्य अवश्य रह गया है जो मुश्किल से पहिचाना जाता है और जिसपर वर्तमान में दिगम्बर-श्वेताम्बर सम्प्रदायों का अधिकार है। किसी ग्रन्थपर एक का और किसी पर दूसरे का। उदाहरण के लिये शाकटायन व्याकरण बिना किसी सन्देह के यापनीय सम्प्रदाय का है जिसपर कई दिगम्बर विद्वानों ने टीकायें[२] लिखकर अपना बना लिया है और शाकटायन आचार्य का ही लिखा हुआ स्त्रीमुक्ति-केवलिभुक्ति

---

१. देखो जैन साहित्य और इतिहास में शाकटायन और उनका शब्दानुशासन शीर्षक लेख।

२. देखो, वही पृ० २३-४०। ३-देखो, वहीं पृ० ५३-५४।

प्रकरण श्वेताम्बर सम्प्रदाय में खप गया है। इसी तरह शिवार्य की भगवती आराधना और उसकी अपराजितसूरिकृत विजयोदया टीका भी यापनीयों की है, परन्तु इनपर इस समय दिगम्बरों का अधिकार है और पं० आशाधर और अमितगति जैसे दिगम्बर विद्वानों की मूलाराधना पर कई टीकायें भी हैं[१]।

ऐसी दशा में यदि उमास्वाति यापनीय हों और उनके सूत्र-पाठ और भाष्य को दोनों सम्प्रदायों ने अपना अपना बना लिया हो तो क्या आश्चर्य है?

तत्त्वार्थ-भाष्य की प्रशस्ति दो आचार्य-घोषनन्दि और शिव श्री–भी उमास्वाति के यापनीय होने का संकेत देते हैं। चन्द्रनन्दि, नागनन्दि, कुमार नन्दि आदि नन्द्यन्त नाम यापनीय-परम्परा में अधिक मिलते हैं, बल्कि यापनीयों का नन्दि संघ नामका एक संघ भी था[२] जब कि श्वेताम्बर सम्प्रदाय में इस तरह के नामों का प्रायः अभाव है। इसी तरह उमास्वाति के प्रगुरु शिवश्री भी आश्चर्य नहीं जो भगवती आराधना के कर्त्ता आर्य शिव ही हों। 'श्री' और 'आर्य' नामांश नहीं किन्तु सम्मानसूचक शब्द जान पड़ते हैं। वास्तविक नाम शिव है, जो छन्द के वजन को ठीक रखने के लिए भाष्य में शिवश्री और आराधना में सिवज्ज या शिवार्य किया गया है। जिस तरह शिवार्य के गुरुओं में जिननन्दि और मित्रनन्दि ये दो नन्द्यन्त नाम है, उसी तरह उमास्वाति के एक गुरु भी घोषनन्दि हैं। वाचना-गुरु 'मूल' का भी शायद पूरा नाम 'मूलनन्दि' हो।

भाष्य में यापनीयत्व : तत्त्वार्थ-भाष्य में कुछ स्थल ऐसे हैं जो उसके यापनीय होने की स्पष्ट सूचना देते हैं–

१ आठवें अध्याय का अन्तिम सूत्र है– सद्वेद्यसम्यक्त्वहास्यरतिपुरुषवेद शुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम्। इसमें पुरुषवेद, हास्य, रति और सम्यक्त्वमोहनीय इन चार प्रकृतियों को पुण्यरूप बतलाया है। परन्तु श्वेताम्बर दिगम्बर दोनों ही सम्प्रदायों में इन्हें पुण्यप्रकृति नहीं माना है। इसलिये श्वेताम्बराचार्य सिद्धसेन गणि को इस सूत्र की टीका करते हुए लिखना पड़ा है कि कर्मप्रकृति ग्रन्थका अनुसरण करने वाले तो ४२ प्रकृतियों को ही पुण्यरूप मानते हैं। उनमें सम्यक्त्व, हास्य, रति, पुरुषवेद नहीं हैं। सम्प्रदाय का विच्छेद हो जाने से मैं नहीं

जानता कि इसमें भाष्यकारका क्या अभिप्राय है और कर्मप्रकृतिग्रन्थ प्रणेताओं का क्या। चौदहपूर्वधारी ही इसकी ठीक ठीक व्याख्या कर सकते हैं[१]।

वास्तव में उक्त चार प्रकृतियों को पुण्यरूप यापनीय सम्प्रदाय ही मानता है और यह न जानने के कारण ही सिद्धसेन गणि उलझन में पड़कर उक्त टीका लिखने को बाध्य हुए हैं।

अपराजितसूरि निश्चय से यापनीय सम्प्रदाय के थे[२]। उन्होंने भी अपनी विजयोदया[३] टीका में उक्त चार प्रकृतियों को पुण्यरूप माना है। यथा– सद्वेद्यं

सम्यक्त्वं रतिहास्यपुंवेदाः शुभे नामगोत्रे शुभं चायुः पुण्य, एतेभ्योऽन्यानि पापानि। – भगवती आ० पृ० १६४३, पंक्ति ४

२. सातवें अध्याय के तीसरे सूत्र के भाष्य में पाँच व्रतों की जो पाँच पाँच भावनायें बतलाई हैं उनमें से अचौर्य व्रतकी भावनायें भगवती आराधना के अनुसार हैं, सर्वार्थसिद्धि के अनुसार नहीं।

अस्तेयस्यानुवीच्यवग्रहयाचनमभीक्ष्णावग्रह-याचनमेतावदित्यवग्रहावधारणं समानधार्मिकेभ्योऽवग्रहयाचनमनुज्ञापितपानभोजनमिति। — भाष्य

अणणुण्णदग्गहणं असंगबुद्धी अणुण्णवित्तावि।
एदावंति य उग्गहजायणमध उग्गहाणुस्स।। १२०८
वज्जणमणुण्णादगिहप्पवेसस्स गोयरादीसु।
इग्गहजायणमणुवीचिए तहा भावणातइए ।।१२०९ — भगवती आराधना

---

२. कर्मप्रकृतिग्रन्थानुसारिणस्तु द्वाचत्वारिंशत्प्रकृतीः पुण्याः कथयन्ति।... आसां च मध्ये सम्यक्त्वहास्यरतिपुरुषवेदा न सन्त्येवेति। कोऽभिप्रायो भाष्यकृतः को वा कर्मप्रकृतिग्रन्थ प्रणयिनामिति सम्प्रदायविच्छेदान्मया तावन्न व्यज्ञायीति। चतुर्दशपूर्वधरादयस्तु संविदते यथावदिति निर्दोषं व्याख्यातम्।

३. देखो, जैनसाहित्य और इतिहास पृ० ४५-५४

४. विजयोदया के कर्त्ता तत्त्वार्थसूत्र खूब परिचित थे। उन्होंने इस टीका में तत्त्वार्थ के बीसों सूत्र उद्धृत किये हैं और उनमें कुछ सूत्र भाष्यानुसारी हैं। जैसे पृ० १५२१ पर उत्तमसंहननस्य आदि सूत्र। विजयोदया टीका सर्वार्थसिद्धि के बाद की मालूम होती है। क्योंकि उसमें एक जगह स० सि० के विचारों का खंडन है–
अग्रं मुखं। एकमग्रमस्येत्येकाग्रः नानार्थावलम्बनेन चिन्तापरिस्पन्दवती तस्या अन्याशेषमुखेभ्यो व्यावर्त्य एकस्मिन्नग्रे नियम एकाग्रचिन्तानिरोध इत्युच्यते। स० कि० ९-२७

इससे भी मालूम होता है कि भाष्यकार और भगवती आराधना के कर्त्ता शिवार्य दोनों एक ही यापनीय सम्प्रदाय के हैं।

३. तीसरे अध्याय के 'आर्या म्लेच्छाश्च' सूत्र के भाष्य में अन्तरद्वीपों के नाम वहाँ के मनुष्यों के नाम से पड़े हुए बतलाये हैं, जैसे एकोरुकों का (एक टांगवालों का) एकोरुक द्वीप आदि[१]। परन्तु इसके विरुद्ध भाष्य-वृत्तिकर्त्ता सिद्धसेनगणि कहते हैं कि उक्त द्वीपों के नाम से वहाँ के मनुष्यों के नाम पड़े हैं, जैसे एकोरुक नामक द्वीप के रहने वाले एकोरुक मनुष्य। वास्तव में वे मनुष्य सम्पूर्ण अंग-प्रत्यंगों से पूर्ण सुन्दर मनोहर थे।[२] अर्थात् इस विषय में भाष्य और वृत्तिकार की मान्यता में भेद है। परन्तु यापनीयों की विजयोदया टीका में भाष्य के ही मत का प्रतिपादन किया गया है[३] और यह भी भाष्यकारके यापनीय होने का सबल प्रमाण है।

भाष्य से श्वेताम्बर सम्प्रदाय का विरोध : भाष्य में अनेक मान्यतायें ऐसी हैं जिनसे श्वेताम्बर सम्प्रदाय का विरोध आता है और जिनसे श्वेताम्बर टीकाकार सिद्धसेन सहमत नहीं हैं। वे उन्हें आगम विरोधी मानते हैं[३]।

२. अध्याय २, सूत्र १७ के भाष्य में उपकरण के दो भेद किये हैं, बाह्य और अभ्यन्तर। इसपर सिद्धसेन कहते हैं कि आगम में ये भेद नहीं मिलते।

केचित्प्रवदन्ति नानार्थावलम्बनेन चिन्तापरिस्पन्दवती तस्या एकस्मिन्नग्रे नियमश्रन्ता निरोध इति। त इदं प्रष्टव्याः- नानार्थाश्रया चिन्ता सा कथमेकत्रैव प्रवर्तते? एकत्रैव चेत्प्रवृत्ता नानार्थावलम्बनं परिस्पन्दं नासादयतीति निरोधवाचोयुक्तिरसंगता। तस्मादेवमत्र व्याख्यानं चिन्ताशब्देन चैतन्यमुच्यते। – भ० आ० पृ० १५२३

पहले अध्याय के पहले सूत्र की सर्वार्थसिद्धि में चारित्र का लक्षण दिया है– ज्ञानवतः कर्मादाननिमित्तक्रियोपरमः सम्यक्चारित्रम्। विजयोदया में ठीक यही अंश उद्धृत है– तथा चाभ्यधायि–कर्मादाननिमित्तक्रियोपरमो ज्ञानवतश्चरित्रमिति। पृ० ३२

१. एकोरुकाणामेकोरुकद्वीपः। एवं शेषाणामपि स्वनामभिस्तुल्यनामानो वेदि तव्याः। –भाष्य।

२. द्वीपनामतः पुरुषनामानि, ते तु सर्वांगसुन्दरा दर्शनमनोरमणाः नैकोरुक्का एव। इत्येवं शेषा अपि वाच्या। — सि० से० वृत्ति।

३. अभाषका एकोरुका लांगूलिकर्विषाणिनः। आदर्शमेषहस्त्यश्वं विद्युदुल्कमुखा अपि।।
हयकर्णगजकर्णाः कर्णप्रावरणास्तया। अत्येवमादयो ज्ञेया अन्तरद्वीपजा नराः।।
समुद्रद्वीपमध्यस्थाः कन्दमूलफलाशिनः। वेदयंते मनुष्यायुः भृगोपमचेष्टिताः।।
— भ० आ० पृ० १३६

यह आचार्य का ही कहीं का सम्प्रदाय है[१] और वास्तव में वह यापनीयों का सम्प्रदाय है।

३. अध्याय ३, सूत्र ३ के भाष्य में रत्नप्रभा के नारकीयों के शरीर की ऊँचाई ७ धनुष, ३ हाथ और ६ अंगुल बतलाई है[२]। सिद्धसेन कहते हैं कि भाष्यकार ने यह अतिदेश से कहीं है। मैंने तो आगम में कहीं यह प्रतरादि भेद से नारकीयों की अवगाहना नहीं देखी[३]।

४. अ० ३, सू० ९ के भाष्य में जो परिहाणि बतलाई है, उसके विषय में सिद्धसेन कहते हैं कि यह परिहाणि गणितप्रक्रिया के साथ जरा भी ठीक नहीं बैठती। आर्षानुसारी गणितज्ञ इसे अन्यथा ही वर्णन करते हैं[४]। हरिभद्रसूरि को भी इसमें कुछ संदेह हुआ है[५]।

५. अ० ३, १५ के भाष्य की टीका करते हुए सिद्धसेन लिखते हैं, इस अन्तरद्वीपक भाष्य को दुर्विदग्धों ने प्रायः नष्ट कर दिया है जिससे भाष्य पुस्तकों (भाष्येषु) में ९६ अन्तरद्वीरप मिलते हैं[६]। पर यह अनार्ष है। वाचक मुख्य सूत्र का उल्लंघन नहीं कर सकते। यह असंभव है[७]।

---

१. ऐसा जान पड़ता है कि यापनीयों के आगम वर्तमान वल्लभी वाचना के आगमों से भिन्न पहले की किसी वाचना के, संभवतः माथुरी वाचना के, थे और इसीलिए विजयोदया में जो उद्धरण हैं वे वर्तमान आगमों में ज्यों के त्यों नहीं, यत्किञ्चित् पाठ-भेद को लिये हुए मिलते हैं । उमास्वाति का भाष्य उसी पूर्वकी वाचना के अनुसार होगा और इसीलिए वह कहीं कहीं सिद्धसेन को आगमविरोधी मालूम हुआ है।

२. आगमे तु नास्ति कश्चिदन्तर्बहिर्भेद उपकरणस्येत्याचार्यस्यैव कुतोऽपि सम्प्रदाय इति।

३. तिलोयपण्णत्तिमें तत्त्वार्थ-भाष्यके ही समान अवगाहना बतलाई है–सत्त-ति-छहत्थंगुलाणि कमसो हवंति घम्माए। — अ० २, ११६

४. उक्तमिदमतिदेशतो भाष्यकारेणास्ति चैतत् न तु मया कचिदागमे दृष्टं प्रतरादिभेदेन नारकाणां शरीरावगाहनमिति।

५. एषा च परिहाणिः आचार्योक्ता न मनागपि गणितप्रक्रियया संगच्छते। गणितशास्त्रविदो हि परिहाणिमन्यथा वर्णयन्त्यागमानुसारिणः।

६. गणितज्ञा एवात्र प्रमाणं।

७. सर्वार्थसिद्धि और तिलोयपण्णत्ति आदि दिगम्बर-ग्रन्थों में भी ९६ ही अन्तरद्वीप बतलाये हैं। भाष्य में भी ९६ का ही पाठ रहा होगा। परन्तु आश्चर्य है कि मुद्रित भाष्यपाठों में ५६ ही अन्तरद्वीप मुद्रित हैं और उक्त भाष्यांश के नीचे ही ९६ अन्तरद्वीपों की सूचना देनेवाली सिद्धसेनकी तथा हरिभद्र की टीका मौजूद है। प्रतिलिपिकारों अथवा मुद्रित करानेवालों का यह अपराध अक्षम्य है।

७. अ० ४, सूत्र ४२ के भाष्यपर सिद्धसेन कहते हैं कि भाष्यकारने सर्वार्थसिद्ध में जघन्य आयु बत्तीस सागरोपम बतलाई है, सो न जाने किस अभिप्राय से, आगम में तो तैतीस सागरोपम है[१]।

८. अ० ४, सू० २६ के भाष्य में लोकान्तिक देवों के आठ भेद हैं। परन्तु भगवती, ज्ञाताधर्मकथा, स्थानांगादि में नौ बतलाये हैं[२]।

९. अ० ९, सू० ६ के भाष्य में भिक्षुप्रतिमाओं के जो १२ भेद किये हैं, उनको ठीक न मानकर सिद्धसेन कहते हैं कि यह भाष्यांश परम ऋषियों के प्रवचन के अनुसार नहीं है किन्तु पागल का प्रलाप है। वाचक तो पूर्ववित् होते हैं, वे ऐसा आर्षविरोधी कैसे लिखते? आगम को ठीक न समझने से जिसे भ्रान्ति हो गई है ऐसे किसी ने यह रच दिया है[३]।

इस तरह और भी अनेक स्थानों में वृत्तिकारने आगम-विरोध बतलाया है, जिसका स्थानाभावसे उल्लेख नहीं किया जा सका। इस विरोध से स्पष्ट समझ में आ जाता है कि भाष्यकारका सम्प्रदाय सिद्धसेन के सम्प्रदाय से भिन्न है और वह यापनीय ही हो सकता है।

मूल सूत्र में भी खटकने वाली बातें : जैसा कि पहले कहा जा चुका है, दिगम्बर सम्प्रदाय तत्त्वार्थ-भाष्य को नहीं मानता, सिर्फ सूत्र-पाठ को मानता है और वह सूत्रपाठ भी भाष्यमान् सूत्र-पाठ से कुछ भिन्न है। फिर भी उसमें भी कुछ सूत्र ऐसे हैं जिनपर बारीकी से विचार किया जाय, तो वे दिगम्बर-सम्प्रदाय की दृष्टि से खटकते हैं—

१. अ० १० के एकादश जिने सूत्र का सीधा और सरल अर्थ यह है कि तेरह-चौदहवें गुणस्थान (जिन) में भूख प्यास आदि ग्यारह परीषह होती हैं परन्तु चूँकि दि० सम्प्रदाय केवली को कवलाहार या भूख-प्यास नहीं मानता है,

---

१. एतच्चान्तरद्वीपकभाष्यं प्रायो विनाशितं सर्वत्र कैरपि दुर्विदग्धैर्येन पण्णवतिरन्तरद्वीपिका भाष्येष दृश्यन्ते। अनार्ष चैतदध्यवसीयते जीवाभिगमादिषु षट्पञ्चाशदन्तरद्वीप काध्ययनात्। नापि च वाचकमुख्याः सूत्रोल्लंघनेनाभिदधत्यसम्भाव्यमानत्यात्।...

२. भाष्यकारेण तु सर्वार्थसिद्धेऽपि जघन्या द्वात्रिंशत्सागरोपमान्यधीता, तन्न विघ्नः केन अभिप्रायेण। आगमस्तावदयं . . . ।

३. भाष्यकृता चाष्टविधा इति मुद्रिताः । आगमे तु नवधैवाधीता।

इसलिए उसे इस सूत्र की व्याख्या दो तरह से करनी पड़ी है। एक तो यह कि जिन सर्वज्ञ में क्षुधा आदि ग्यारह परीषह वेदनीयकर्मजन्य हैं लेकिन मोह न होने के कारण वे भूख आदि वेदनारूप न होने से सिर्फ उपचार से द्रव्य परीषह हैं। दूसरी तरह यह कि उक्त सूत्र में 'न' का अध्याहार करके यह अर्थ किया जाय कि जिन भगवान में वेदनीय कर्म होने पर भी तदाश्रित क्षुधा आदि ग्यारह परीषह मोह का अभाव होने के कारण बाधारूप न होने से हैं ही नहीं।[1] परन्तु वास्तव में यह खींचातानी है। सूत्रकार यापनीय हैं, इसीलिए वे केवली को कब लाहार[2] मानते हैं और उनके मत से जिन के ग्यारह परीषह होना ठीक है।

२. चौथे अध्याय का 'दशाष्टपंचद्वादशविकल्पाः कल्पोपन्नपर्यन्ताः' सूत्र दोनों सूत्रपाठों में एक-सा मिलता है जिसके अनुसार भवनवासियों के दस, व्यन्तरोंके आठ, ज्योतिष्कों के पाँच और कल्पवासियों के बारह भेद बतलाये हैं; परन्तु आगे के सौधर्मेशान आदि सूत्र में जिसमें कल्पवासियों के भेद गिनाये हैं, भिन्नता आ गई है। भाष्यमान्यपाठ में जहाँ कल्पों के नाम १२ हैं, वहाँ दिगम्बर सूत्रपाठ में १६ हैं, अर्थात् ब्रह्मोत्तर, कापिष्ठ, शुक्र और सतार ये चार नाम और बढ़ गये हैं। चूँकि दिगम्बर समप्रदाय में कल्प १६ माने जाते हैं, और तदनुसार ही आगे के सूत्र को बढ़ाकर उनका नाम निर्देश भी कर दिया गया है, इस लिए पहले सूत्र में भी द्वादश के स्थान में षोडश पद होना चाहिये था। अर्थात् सूत्र का रूप दशाष्टपंचषोडशविकल्पाः कल्पोपन्नपर्यन्ताः होना ठीक होता। सो नहीं है और यह खटकनेवाली बात है।

३. नवें अध्याय के 'पुलाकबकुश' और 'संयमश्रुत' आदि सूत्रों में जिन पाँच तरह के निर्ग्रन्थों का वर्णन है, उनकी चर्चा दिगम्बर सम्प्रदाय के किसी भी प्राचीन ग्रन्थ में—तत्त्वार्थ टीकाओं के सिवाय—नहीं दिखलाई देती। इनमें से पहले के तीन निग्रन्थों—पुलाक बकुश और कुशील मुनियों—का दिगम्बर

---

१. इस विषय पर डॉ. हीरालालजी जैनने जैनसिद्धान्तभास्कर (भाग१०, अंक २, पृष्ठ ८९-९४) में प्रकाशित क्या तत्त्वार्थसूत्रकार और उनके टीकाकारों का अभिप्राय एक ही हैं? शीर्षक लेख में विशेष प्रकाश डाला है।

२. यापनीय संघ के शाकटायनाचार्य ने अपने केवलिमुक्ति नामक प्रकरण में कवलाहारका जोरों से समर्थन किया है। देखो, जैनसाहित्य संशोधक भाग २, अंक ३।

मुनियों की चर्या के साथ कोई मेल नहीं बैठता। इनके अन्वर्थक नाम, और भाष्य में जो इनके स्वरूप बतलाये हैं वे, इनकी चर्या को काफी शिथिल प्रकट करते हैं। सर्वार्थसिद्धिकार ने इनके स्वरूप को काफी संभालने की कोशिश की है, परन्तु दूसरे टीकाकार श्रुतसागरसूरि ने संयमश्रुत आदि सूत्र की व्याख्या करते हुए यह स्वीकार किया है कि असमर्थमुनि शीतकालादि में वस्त्रादि भी ग्रहण कर सकते हैं और इसे कुशीलमुनि की अपेक्षा से भगवती ाराधना के अनुकूल भी बतलाया है।[२] इस तरह उन्होंने एक तरह से यापनीयों का ही मत मान लिया है जो अपवादरूप से मुनियों को वस्त्रग्रहण की व्यवस्था देता है। कहने का अभिप्राय यह कि ये कुशीलादि मुनि यापनीय सम्प्रदाय के अनुसार ही निर्ग्रन्थ कहला सकते हैं और सूत्रकार यापनीय हैं।

४. तत्त्वार्थ के दो सूत्रों (अ० ७, सू० २१-२२) में जो गृहस्थों के लिए सात उत्तरव्रत या शील और आठवीं मारणान्तिकी सल्लेखना सेवनीय बतलाई है, सो भी दिगम्बरसम्प्रदाय दृष्टि से खटकने वाली है।दिग्विरति, देशविरति, अनर्थदण्डविरति, सामायिक, प्रोषधोपवास, उपभोग परिभोगपरिमाण और अतिथिसंविभाग ये सात उत्तरव्रत हैं। भाष्य में इनको शील तो कहा है परन्तु गुणव्रत और शिक्षा व्रतरूप से इनको दो भागों में विभक्त नहीं किया। परन्तु दिगम्बर सम्प्रदाय के अग्रणी आचार्य कुन्दकुन्द अपने चारित्र-पाहुड़ में दिग्विरति, अनर्थदण्डविरति, और भोगोपभोगपरिमाण को तीन गुणव्रत और सामायिक, प्रोषधोपवास, अतिथिसंविभाग और अन्तसल्लेखना को चार शिक्षाव्रत बतलाकर सात शीलों की पूर्ति करते हैं।[१] इनमें देशविरति को कोई स्थान नहीं दिया और उसके बदले में सल्लेखना को ले लिया, जो तत्त्वार्थ में सात उत्तर व्रतों के अतिरिक्त है।

श्वेताम्बर सम्प्रदाय के औपपातिकसूत्र में भी देशविरति को सात शीलो में गिनाकर सल्लेखना को अलग से सेवनीय बतलाया है।[२]

---

१. पुलाको निःसार इति प्ररूढं लोके। शबलपर्यायवाची बकुशशब्दः। सातिचारत्वाञ्चरणपटं शबलयति। अनियमितेन्द्रियाः कुशीलाः।

२. लिंग द्विविधं द्रव्यभावलिंगभेदात्। तत्र भावलिंगिनः पञ्च प्रकारा अपि निर्ग्रन्था भवन्ति। द्रव्यलिंगिनः असमर्था महर्षयः शीतकालादौ कम्बलादिकं गृहीत्वा न प्रक्षालयन्ते न सीव्यन्ति न प्रयत्नादिकं कुर्वन्ति अपरकाले परिहरन्तीति भगवती आराधना प्रोक्ताभिप्रायेण कुशीलापेक्षया वक्तव्यम्।

श्री कीर्तिरत्नसूरि रचित नेमिनाथ महाकाव्य

प्रो. सत्यव्रत 'तृषित'

जैन संस्कृत महाकाव्यों में कवि चक्रवर्ती कीर्त्तिराज उपाध्याय कृत नेमिनाथ महाकाव्य को गौरवमय पद प्राप्त है। इसमें जैन धर्म के बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ के प्रेरक चरित्र के कतिपय प्रसंगों को, महाकाव्योचित विस्तार के साथ, बारह सर्गों के व्यापक कलेवर में प्रस्तुत किया गया है। कीर्त्तिराज कालिदासोत्तर उन इने-गिने कवियों में हैं, जिन्होंने माघ एवं हर्ष की कृत्रिम तथा अलंकृतिप्रधान शैली के एकच्छत्र शासन से मुक्त होकर अपने लिये अभिनव सुरुचिपूर्ण मार्ग की उद्भावना की है। नेमिनाथ काव्य में भावपक्ष तथा कलापक्ष का जो मंजुल समन्वय विद्यमान है, वह ह्रासकालीन कवियों की रचनाओं में अतीव दुर्लभ है। पाण्डित्य प्रदर्शन तथा बौद्धिक विलास के उस युग में नेमिनाथ महाकाव्य जैसी प्रसादपूर्ण कृति की रचना करने में सफल होना कीर्त्तिराज की बहुत बड़ी उपलब्धि है।

नेमिनाथ महाकाव्य का महाकाव्यत्व :

प्राचीन भारतीय आलंकारिकों ने महाकाव्य के जो मानदण्ड निश्चित किये हैं, उनकी कसौटी पर नेमिनाथ काव्य एक सफल महाकाव्य सिद्ध होता है। शास्त्रीय विधान के अनुरूप यह सर्गबद्ध रचना है तथा इसमें, महाकाव्य के लिये आवश्यक, अष्टाधिक बारह सर्ग विद्यमान है। धीरोदात्त गुणों से युक्त क्षत्रियकुल-प्रसूत देवतुल्य नेमिनाथ इसके नायक हैं। नेमिनाथ महाकाव्य में श्रृंगार रस की प्रधानता है। करुण, वीर तथा रौद्र रस का आनुषंगिक रूप में परिपाक हुआ है। महाकाव्य के कथानक का इतिहास प्रख्यात अथवा सदाश्रित होना आवश्यक माना गया है। नेमिनाथकाव्य का कथानक लोकविश्रुत नेमिनाथ के चरित से सम्बद्ध है। चतुर्वर्ग में से धर्म तथा मोक्ष की प्राप्ति इसका लक्ष्य है। धर्म का अभिप्राय यहाँ नैतिक उत्थान तथा मोक्ष का तात्पर्य

आमुष्मिक अभ्युदय है। विषयों तथा अन्य सांसारिक आकर्षणों का परित्याग कर परम-पद प्राप्त करने की ध्वनि, काव्य में सर्वत्र सुनाई पड़ती है।

महाकाव्य की रुढ़ परम्परा के अनुसार नेमिनाथ महाकाव्य का प्रारम्भ नमस्कारात्मक मंगलाचरण से हुआ है, जिसमें स्वयं काव्यनायक नेमिनाथ की चरणवन्दना की गयी है :-

वन्दे तन्नेमिनाथस्य पदद्वन्द्वं श्रियाम्पदम्।
नाथैरसेवि देवानां यद्भृंगैरिव पंकजम्।।१।१

आलंकारिकों के विधान का पालन करते हुए काव्य के आरम्भ में सज्जन-प्रशंसा तथा खलनिन्दा भी की गयी है। यदुपति समुद्रविजय की राजधानी के मनोरम वर्णन में कवि ने सन्नगरीवर्णन की रूढ़ि का निर्वाह किया है। काव्य का शीर्षक चरितनायक के नाम पर आधारित है, तथा प्रत्येक सर्ग का नामकरण उसमें वर्णित विषय के अनुरूप किया गया है, जिससे विश्वनाथ के महाकाव्यीय विधान की पूर्ति होती है। अन्तिम सर्ग के एक अंश में चित्रकाव्य की योजना करके जैन कवि ने हेमचन्द्र, वाग्भट आदि जैनाचार्यों के विधान का पालन किया है। छन्द प्रयोग सम्बन्धी परम्परागत नियमों का प्रस्तुत काव्य में आंशिक रूप से निर्वाह हुआ है। काव्य के पांच सर्गों में छन्द बदल जाता है। यह साहित्याचार्यों के विधान के सर्वथा अनुरूप है। किन्तु शेष सात सर्गों में नाना वृत्तों का प्रयोग शास्त्रीय नियमों का स्पष्ट उल्लंघन है क्योंकि महाकाव्य में छन्दवैविध्य एक-दो सर्गों में ही काम्य माना गया है। महाकाव्यों की मान्य परिपाटी के अनुसार नेमिनाथकाव्य में नगर, पर्वत, प्रभात, वन, दूतप्रेषण (प्रतीकात्मक), युद्ध, सैन्य-प्रयाण, पुत्रजन्म, जन्मोत्सव, षड् ऋतु आदि वर्ण्यविषयों के विस्तृत वर्णन पाये जाते है। वस्तुतः काव्य में इन्हीं वस्तुव्यापार वर्णनों का प्राधान्य है।

परम्परागत नियमों के अनुसार महाकाव्य में पांच नाट्यसन्धियों की योजना आवश्यक मानी गयी है। नेमिनाथ महाकाव्य का कथानक यद्यपि अतीव संक्षिप्त है, तथापि इसमें पांचों सन्धियां खोजी जा सकती हैं। प्रथम सर्ग में शिवादेवी के गर्भ में जिनेश्वर के अवतरित होने में मुखसन्धि है। इसमें

कथानक के फलागम का बीज निहित है तथा उसके प्रति पाठक की उत्सुकता जाग्रत होती है। द्वितीय सर्ग में स्वप्नदर्शन से लेकर तृतीय सर्ग में पुत्रजन्म तक प्रतिमुख सन्धि स्वीकार की जा सकती है, क्योंकि मुखसन्धि में जिन कथाबीज का वपन हुआ था, वह यहाँ कुछ अलक्ष्य रहकर पुत्रजन्म से लक्ष्य हो जाता है। चतुर्थ सर्ग के अष्टम सर्ग तक गर्भसन्धि की योजना मानी जा सकती है। सूतिकर्म, स्नात्रोत्सव तथा जन्मोत्सव में फ़लागम काव्य के गर्भ में गुप्त रहता है। नवें से ग्यारहवें सर्ग तक एक ओर नेमिनाथ द्वारा वैवाहिक प्रस्ताव स्वीकार कर लेने से मुख्यफल की प्राप्ति में बाधा उपस्थित होती है, किन्तु दूसरी ओर वधूग्रह में वध्य पशुओं का करुणक्रन्धन सुनकर उनके निर्वेदग्रस्त होने तथा दीक्षा ग्रहण करने से फलप्राप्ति निश्चित हो जाती है। अतः यहाँ निमर्श सन्धि का सफल निर्वाह हुआ है। ग्यारहवें सर्ग के अन्त में केवलज्ञान तथा बारहवें सर्ग में परम पद प्राप्त करने के वर्णन में निर्वहण सन्धि विद्यमान है। इन शास्त्रीय लक्षणों के अतिरिक्त नेमिनाथ महाकाव्य में महाकाव्योचित रस व्यंजना, भव्य भावों की अभिव्यक्ति, शैली की मनोरमता तथा भाषा की उदात्तता विद्यमान हैं।

नेमिनाथ महाकाव्य की शास्त्रीयता :

नेमिनाथकाव्य पौराणिक महाकाव्य है अथवा इसकी गणना शास्त्रीय शैली के महाकाव्यों में की जानी चाहिये, इसका निश्चयात्मक उत्तर देना कठिन है। इसमें एक ओर पौराणिक महाकाव्यों के तत्त्व वर्तमान हैं, तो दूसरी ओर यह शास्त्रीय महाकाव्यों की भाँति इसमें शिवादेवी के गर्भ में जिनेश्वर का अवतरण होता है जिसके फलस्वरूप उसे चौदह स्वप्न दिखाई देते हैं। दिक्कुमारियाँ नवजात शिशु का सूतिकर्म करने के लिये आती हैं। उसका स्नात्रोत्सव इन्द्रद्वारा सम्पन्न होता है। दीक्षा से पूर्व भी वह भगवान् का अभिषेक करता है। पौराणिक शैली के अनुरूप इसमें दो स्वतन्त्र स्तोत्रों का समावेश किया गया है। कतिपय अन्य पद्यों में भी जिनेश्वर का प्रशस्तिगान हुआ है। जिनेश्वर के जन्मोत्सव में देवांगनाएं नृत्य करती हैं तथा देवगण पुष्पवृष्टि करते हैं। पौराणिक महाकाव्यों की परिपाटी के अनुसार इसमें नारी को जीवन-पथ

की बाधा माना गया है। काव्यनायक दीक्षा लेकर केवलज्ञान तथा अन्ततः परमपद प्राप्त करते हैं। उनकी देशना का समावेश भी काव्य में हुआ है।

इन समूचे पौराणिक तत्त्वों के विद्यमान होने पर भी नेमिनाथ काव्य को पौराणिक महाकाव्य मानना न्यायोचित नहीं है। इसमें शास्त्रीय महाकाव्य के लक्षण इतने पुष्ट तथा प्रचुर हैं कि इसकी यत्किंचित पौराणिकता उनके सिन्धु प्रवाह में पूर्णतया मज्जित हो जाती है। ह्रासकालीन शास्त्रीय महाकाव्य की प्रमुख विशेषता–वर्ण्यविषय तथा अभिव्यंजना शैली में वैषम्य–इसमें भरपूर मात्रा में वर्तमान है। शास्त्रीय महाकाव्यों की भाँति नेमिनाथ महाकाव्य में वस्तुव्यापारोंकी विस्तृत योजना हुई है। इसकी भाषा में अद्‌भुत उदात्तता तथा शैली में महाकाव्योचित प्रौढ़ता एवं गरिमा है। चित्रकाव्य की योजना के द्वारा काव्य में चमत्कृति उत्पन्न करने तथा अपना रचनाकौशल प्रदर्शित करने का प्रयास भी कवि ने किया है। अलंकारों का भावपूर्ण विधान, रस, व्यंजना, प्रकृति तथा मानव-सौन्दर्य का हृदयग्राही चित्रण, सुमधुर छन्दों का प्रयोग आदि शास्त्रीय काव्यों की ऐसी विशेषताएं इस काव्य में हैं कि इसकी शास्त्रीयता में तनिक भी सन्देह नहीं रह जाता। वस्तुतः नेमिनाथ महाकाव्य की समग्र प्रकृति तथा वातावरण शास्त्रीय शैली के महाकाव्य के अनुसार है। अतः, इसे शास्त्रीय महाकाव्यों की कोटि में स्थान देना सर्वथा उपयुक्त है।

कविपरिचय तथा रचनाकाल :

अन्य अधिकांश जैन काव्यों की भाँति कीर्तिराज के नेमिनाथमहाकाव्य में कवि प्रशस्ति नहीं है। अतः काव्य से उनके जीवन तथा स्थितिकाल के विषय में कुछ भी ज्ञान नहीं होता। अन्य ऐतिहासिक लेखों के आधार पर उनके जीवनवृत्त का पुनर्निर्माण करने का प्रयास किया गया है। उनके अनुसार कीर्त्तिराज अपने समय के प्रख्यात तथा प्रभावशाली खरतरगच्छीय आचार्य थे। वे संखवालगोत्रीय शाह कोचर के वंशज देपा के कनिष्ठ पुत्र थे। उनका जन्म सम्वत् १४४९ में देपा की पत्नी देवलदे की कुक्षि से हुआ। उनका जन्म नाम देल्हाकुंवर था। देल्हाकुंवर ने चौदह वर्ष की अल्पावस्था में, सम्वत् १४६३ की आषाढ़ बदी एकादशी को दीक्षा ग्रहण की। जिनवर्द्धनसूरि ने आपका नाम

कीर्त्तिराज रखा। कीर्त्तिराज के साहित्यगुरु भी जिनवर्द्धनसूरि ही थे। उनकी प्रतिभा तथा विद्वत्ता से प्रभावित होकर जिनवर्द्धनसूरि ने सम्वत् १४७० में वाचनाचार्य पद तथा दस वर्ष पश्चात् उन्हें मेहवे में उपाध्याय पद पर प्रतिष्ठित किया। पूर्व देशों का विहार करते समय जब कीर्तिराज जैसलमेर पधारे, तो गच्छनायक जिनभद्रसूरि ने योग्य जानकर उन्हें सम्वत् १४९७ की माघ शुक्ला दशमी को आचार्य पद प्रदान किया। तत्पश्चात् वे कीर्तिरत्नसूरि के नाम से प्रख्यात हुए। आपके अग्रज लक्खा और केल्हा ने इस अवसर पर पद-महोत्सव का भव्य आयोजन किया। कीर्तिराज ७६ वर्ष की पौढ़ावस्था में, पच्चीस दिन की अनशन-आराधना के पश्चात् सम्वत् १५२५ वैशाख बदि पंचमी को वीरमपुर में स्वर्ग सिधारे। संघ ने वहाँ पूर्व दिशा में एक स्तूप का निर्माण कराया जो अब भी विद्यमान है। वीरमपुर, महवे के अतिरिक्त जोधपुर, आबू आदि स्थानों में भी आपकी चरणपादुकाएं स्थापित की गयीं। जयकीर्ति और अभयविलासकृत गीतों से ज्ञान होता है कि सम्वत् १८७९, वैशाख कृष्ण दशमी को गड़ाले (बीकानेर का समीपवर्ती नालग्राम) में उनका प्रासाद बनवाया गया था। कीर्तिरत्नसूरि के ५१ शिष्य थे। नेमिनाथ काव्य के अतिरिक्त उनके कतिपय स्तवनादि भी उपलब्ध हैं।[१]

नेमिनाथ महाकाव्य उपाध्याय कीर्तिराज की रचना है। कीर्तिराज को उपाध्याय पद संवत् १४८० में प्राप्त हुआ और सं० १४९७ में वे आचार्य पद पर आसीन होकर कीर्तिरत्नसूरि बने। अतः नेमिनाथकाव्य का रचनाकाल संवत् १४८० तथा १४९७ के मध्य मानना सर्वथा न्यायोचित है। सं० १४९५ की लिखी हुई इसकी प्राचीनतम प्रति प्राप्त है और यही इसका रचनाकाल है।

कथानक :

नेमिनाथ महाकाव्य के बारह सर्गों में तीर्थंकर नेमिनाथ का जीवनचरित निबद्ध करने का उपक्रम किया गया है। कवि ने जिस परिवेश में जिनचरित

---

१. विस्तृत परिचय के लिये देखिये श्री अगरचन्द नाहटा तथा भंवरलाल नाहटा द्वारा सम्पादित ऐतिहासिक जैन काव्यसंग्रह, पृ० ३६-४०।

प्रस्तुत किया है, उसमें उसकी कतिपय प्रमुख घटनाओं का ही निरूपण सम्भव हो सका है।

च्यवनकल्याणक वर्णन नामक प्रथम सर्ग में यादव राजधानी सूर्यपुर में समुद्रविजय की पत्नी, शिवादेवी के गर्भ में बाईसवें जिनेश के अवतरण का वर्णन है। अलंकारों के विवेकपूर्ण योजना तथा बिम्बवैविध्य के द्वारा कवि सूर्यपुर का रोचक कवित्वपूर्ण चित्र अंकित करने में समर्थ हुआ है। द्वितीय सर्ग में शिवादेवी परम्परागत चौदह स्वप्न देखती है। समुद्रविजय स्वप्नफल बतलाते हैं कि इन स्वप्नों के दर्शन से तुम्हें प्रतापी पुत्र की प्राप्ति होगी जो अपने भुजबल से चारों दिशाओं को जीतकर चौदह भुवनों का अधिपति बनेगा। प्रभात वर्ण नामक इस सर्ग के शेषांक में प्रभात का मार्मिक वर्णन हुआ है। तृतीय सर्ग में समुद्रविजय स्वप्नदर्शन का वास्तविक फल जानने के लिये कुशल ज्योतिषियों को निमंत्रित करते हैं। दैवज्ञों ने बताया कि इन चौदह स्वप्नों को देखनेवाली नारी की कुक्षि में ब्रह्मतुल्य जिन अवतीर्ण होते हैं। समय पर शिवा ने एक तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया। चतुर्थ सर्ग में दिक्कुमारियाँ नवजात शिशु का सूतिकर्म करती हैं। मेरुवर्णन नामक पंचम सर्ग में इन्द्र शिशु को जन्माभिषेक के लिये मेरु पर्वत पर ले जाता है। इसी प्रसंग में मेरु का वर्णन किया गया है। छठे सर्ग में चेटियों से पुत्रजन्म का समाचार पाकर समुद्रविजय आनन्द विभोर हो जाता है। वह पुत्र-प्राप्ति के उपलक्ष में राज्य के समस्त बन्दियों की मुक्त कर देता है तथा जीववध पर प्रतिबन्ध लगा देता है। उसने जन्मोत्सव का भव्य आयोजन किया। शिशु का नाम अरिष्टनेमि रखा गया। आठवें सर्ग में अरिष्टनेमि के शारीरिक सौंदर्य तथा परम्परागत छह ऋतुओं का हृदयग्राही वर्णन है। एक दिन नेमिनाथ ने पांचजन्य को कौतुकवश इस वेग से फूंका कि तीनों लोक भय से कम्पित हो गये। कृष्ण को आशंका हुई कि कहीं यह भुजबल से मुझे राज्यच्युत न कर दे, किन्तु उन्होंने श्रीकृष्ण को आश्वासन दिया कि मुझे सांसारिक विषयों में रुचि नहीं है, तुम निर्भय होकर राज्य का उपभोग करो। नवें सर्ग में नेमिनाथ के माता-पिता के आग्रह से श्रीकृष्ण की पत्नियां, नाना युक्तियां देकर उन्हें वैवाहिक जीवन में प्रवृत्त करने का प्रयास

करती हैं। उनका प्रमुख तर्क है कि मोक्ष का लक्ष्य सुख-प्राप्ति है, किन्तु वह विषय भोग से ही मिल जाये, तो कष्टदायक तप की क्या आवश्यकता? नेमिनाथ उनकी युक्तियों का दृढ़तापूर्वक खण्डन करते हैं। उनका कथन है कि मोक्षजन्य आनन्द तथा विषय-सुख में उतना ही अन्तर है जितना गाय तथा स्नुही के दूध में। विषयभोग से आत्मा तृप्त नहीं हो सकती, किन्तु माता के अत्यधिक आग्रह से वे, केवल उनकी इच्छापूर्ति के लिये गार्हस्थ्य जीवन में प्रवेश करना स्वीकार कर लेते है। उग्रसेन की लावण्यवती पुत्री राजीमती से उनका विवाह निश्चय होता है। दसवें सर्ग में नेमिनाथ वधुग्रह को प्रस्थान करते हैं। यहीं उनको देखने के लिये लालायित पुर-सुन्दरियों का वर्णन किया गया है। वधुग्रह में बारात के भोजन के लिये बंधे हुए मरणासन्न निरीह पशुओं का चीत्कार सुनकर उन्हें आत्मग्लानि होती है और वे विवाह को बीच में ही छोड़कर दीक्षा ग्रहण कर लेते हैं। ग्यारहवें सर्ग के पूर्वार्द्ध में अप्रत्याशित प्रत्याख्यान से अपमानित राजीमती का करुण विलाप है। मोह-संयम युद्धवर्णन नामक इस सर्ग के उत्तरार्द्ध में मोह तथा संयम के प्रीतकात्मक युद्ध का अतीव रोचक वर्णन है। पराजित होकर मोह नेमिनाथ के हृदय दुर्ग को छोड़ देता है। जिससे उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति होती है। बारहवें सर्ग में यादव केवलज्ञानी प्रभु की वन्दना करने के लिये उज्जयन्त पर्वत पर जाते हैं। जिनेश्वर की देशना के प्रभाव से कुछ दीक्षा ग्रहण कर लेते हैं तथा कुछ श्रमण धर्म स्वीकार करते हैं। जिनेन्द्र राजीमती को चरित्ररथ पर बैठाकर मोक्षपुरी भेज देते हैं और कुछ समय पश्चात् अपनी प्राणप्रिया से मिलने के लिये स्वयं भी परम पद को प्रस्थान करते हैं।

क्रमशः

सिंहल की राजकन्या

सुदर्शना

आचार्यश्री विजयविशालसेनसूरिजी म. सा.

भीषण कल्लोल, और घातक जीवों से भरा समुद्र, भुजाओं से तैरना, चले जाते जंगली हाँथी को पूँछ पकड़कर रोक लेना, केसरी वनराज की पीठ पर चढ़कर सवारी करना, विकराल अजगर का जबड़ा हाँथों से पकड़कर फाड़ देना, जहरीले साँपों के साथ बन्द कोठरी में कई दिनों तक रह लेना और मगरमच्छ के मुंह में माथा रख देना ये सचमुच ही बड़े साहस हैं। ऐसे साहस करने वाले वीरों का इस धरती पर कोइ पार भी नहीं । लेकिन हे अनाथों के नाथ ! मोह को विश्व के मैदान में पछाड़ने वाले, कामना को, इच्छाओं की जीतने वाले, कामदेव को परांजित इन्द्रियों को वशीभूत करने वाले सच्चे पराक्रमी एवं विजेता तो सिर्फ आप ही हैं। संसार के समर्थ योद्धा और अद्भुत वीरों का पराक्रम-आपके सामने तुच्छ है।

आपके ऐश्वर्य एवं विभूति का कोई मुकाबला नहीं। आपकी हुकूमत के आगे संसार की सत्ता काफी फीकी पड़ती है- जो हीरों के जेवर से भी नहीं चमक पाती।

कुल, बल, रूप, श्रुत, ऐश्वर्य आदि से परिपूर्ण होते हुए भी उसे अर्थ शून्य असार जानकर आपने सब छोड़ दिया। धन्य हैं भगवान्। आप धन्य हैं। आपके माता-पिता, आपके धर्मगुरू को धन्य है। इत्यादि गुण कीर्तन करती करती वह आचार्य देव श्री के समक्ष खड़ी रही।

आह्लादक, शान्त, सुन्दर वदन, भव्य ललाट, वैरी पर भी अमृत बरसाने वाली करुणामय तेजस्वी आंखे, मानो दया वात्सल्य की साक्षात्य मूर्ति।

ओह दयालु ! मैं धन्य बन गयी, अमर चुकी, आज मेरी सभी इच्छाएं सफल हुई। मेरी सारी कामना पूरी हो गयी। प्रभो ! मेरे सारे पाप.... संताप का नाश हो गया। आप धन्य हैं प्रभु.... परम धन्य हैं। आप तो भवसागर तैर गये हैं। मुझे भी तार लेना। इत्यादि बोलते बोलते वह गद् गद् हो गयी। उसका कंठ अवरूद्ध हो गया। रोम रोम उल्लसित हो गये। आंखों में हर्ष के आंसू उभर

आये। कोशिश करने पर भी वह कुछ न बोल सकी। तीन प्रदक्षिणा देकर विधिवत् वंदना की। हाथ जोड़ सामने भूमि पर बैठ गयी और स्वस्थ हो बोली-

ओ अकारण बन्धु! इस संसार सागर में आप ही हमारे लिये एक मात्र सेतु, आधार, द्वीप, गति एवं उत्तम शरण हो। कल्याण-धर्म की आधारशिला और उत्तमता के निधान हो। मैं आपको बारम्बार बन्दना करती हूँ और शाता पूछती हूँ।

धर्मलाभ, वत्से! धर्मलाभ। सुदर्शना! परमगुरु वीतराग भगवान् तथा धर्मदेव के पुण्य प्रताप से हम सब सुखशाता में हैं। अवधिज्ञानी आचार्यदेव श्री ज्ञानभानुसूरिजी ने धीर गम्भीर ध्वनि से धर्म आशीष दी। अन्य सभी राजा आदि नर-नारियाँ भी गुरुवंदन कर उचित स्थान में आदरपूर्वक बैठ गये। बाहर बजते बाजे एवं जयनाद रुकवाये गये और गुरुदेव ने सभी को धर्मोपदेश देने का शुभारम्भ किया।

हे महाभाग पुण्यवानो! सारा संसार गतिशील है। जलस्थल कहीं भी रुकावट नहीं, एक बड़ी हल-चल और रवानगी है। एक पल के लिए भी निष्क्रियता नहीं है। ये गति भी नियमानुसार हो रही है। यहां सबसे बड़ी चीज नियम् है। नियम से चलती इस दुनिया से बंधी है। नियम ही व्यवस्था और नियम से ही विनाश होता है। अर्थात् जो कुछ भी परिणाम लाना चाहते हैं वो इस नियम के अधीन ही ला सकते हैं।

झाड़ पर लाल कूंपल का पैदा होना। हरापत्ता बनकर मनहर मुस्काना और हवा में नाचना। पत्ते का बड़ा होना और पककर पीला हो जाना। देखते देखते पीला रंग सफेदी में बदल जाना .... फिर .... फिर.... बस एक ही परिणाम। हवा का मामूली झोंका आना और पत्ते का गिर जाना। कितना विचित्र! किन्तु उतना ही व्यवस्थित। उत्पन्न होना, विकसित होना, गलने लगना-ढलने लगना और टूट पड़ना। यह सारा क्रम चाहे विकास नियमाधीन!! गहराई से देखें तो पता चलता है पूरे विश्व में कहीं भी नियमहीनता-अन्धाधुन्धी है ही नहीं। यहां आपाधापी की कोई गुंजाईश ही नहीं। चांद सूरज, पृथ्वी-सागर, पवन-पानी, आग, औषध, जीवन-मृत्यु सब ही अपने नियम से बंधे हैं और नियम के अनुकूल ही परिणाम आ रहा है।

जीव के भी अपने नियम हैं, यदि नियम विरुद्ध किया जाय तो परिणाम भी विरुद्ध ही आयेगा।

सुदर्शना! नमस्कार महामंत्र और नियमों के प्रताप से तुझे उत्तम सामग्री और अपार वैभव प्राप्त हुए हैं। नियमों में तुझे आदर होने के कारण ही तुझे

अन्त समय में गुरुओं का उपदेश रुचिकर लगा। नियम स्वीकारने को जी राजी हुआ। गुरुवाणी के प्रति अपूर्व श्रद्धा के कारण जो व्रत-नियम तूने अपनाये, उसके ही प्रताप से अति दुष्कर तप-स्वाध्याय के करने वाले मुनिराजों की प्राप्ति तथा अति कठिन जाति स्मरण ज्ञान उस धर्महीन कुल में भी तुझे मिला।

आत्मा की सुरक्षा के लिये अति दुर्गम दुर्ग का काम नियम ही करता है। व्रत-नियमहीन मनुष्यों की गिनती धर्महीन मनुष्यों में होती है। नियम से पशु भी तैर जाते हैं, बिना नियम मनुष्य भी डूब जाते हैं।

सारी अच्छाइयों का मूल नवकार महामंत्र है। इस मंत्र से पशु का भविष्य भी सुधर जाता है। जिसने नवकार को अपना आधार बनाया है वह कभी दुर्गति में नहीं जाता। रोग-शोक अपकीर्ति नहीं पाता। शत्रु, चोर, अग्नि, जल, व्याधि, वध, बंधन, विष, भूत, प्रेत, वैताल और दुष्टग्रह आदि नवकार मंत्र के स्मरण मात्र से प्रभावहीन हो जाते हैं और किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचा पाते। जिसके पास नवकार है उसका विषधर और क्रूरसिंह जैसे भयंकर प्राणी भी कुछ नहीं कर सकते। बड़े महान् और ज्ञान के सागर मुनिराजों का भी सच्चा सहारा एकमात्र नवकार मंत्र हैं।

प्रथम ज्ञान प्राप्त कर जीवन को नियममय और नवकारमय बनाना चाहिये। जीवन को नियममय बनाने के लिए संयम, संयम के लिए सम्यग्दर्शन, दर्शन के लिये सम्यग्ज्ञान चाहिये। सम्यग्ज्ञान के लिये सद्गुरुओं का समागम और उनके वचनों का सादर श्रवण सदा मिलना चाहिए। धर्मवाणी के श्रवण से अज्ञान, कुमति और पापपुंज का नाश होता है। विषम-कषायों के परिणामों का खयाल आता है। फलस्वरूप तृष्णा से छुटकारा और तृप्ति का आनन्द मिलता है।

आलस्य, मोह, अनादर, मान, क्रोध, प्रमाद, कृपणता, भय, शोक, अज्ञान, चंचलता, कुतूहल और खेल-क्रीड़ा ये सब धर्म प्राप्ति और आत्म कल्याण के मार्ग में बड़ी बाधा हैं। इन्हें तेरह काठिया कहते हैं। धैर्यपूर्वक इन अवरोधों को दूरकर कल्याण मार्ग में आगे बढ़ने का परम पुरुषार्थ करना चाहिये। आत्म वैभव आत्म कल्याण के सिवा सब कुछ प्रपंच है। धोखा है-प्रवंचना है।

इस प्रपंच में बड़े बड़े ठगा जाते हैं। संसार की माया एक रंगीन सपने से ज्यादा महत्त्व नहीं रखती। आंख बन्द होते ही ये सपना खत्म होता और आंख खुलते ही शुरू हो जाता है, इत्यादि ज्ञान भानुसूरिजी का उपदेश सुन

सुदर्शना प्रफुल्लित हो बोली-भवगन्! मेरा महान् पुण्योदय हुआ। मैं जो चाहती थी वह सब मुझे आज यहां गुरु कृपा से प्राप्त हुआ है। प्रभो! मुझ अबोध पर कृपा कर फिलहाल आप यहीं बिराजें और उपदेश फरमाकर मेरे वैराग्य को दृढ़ बनाइये।

राजा आदि ने भी प्रार्थना की। बारम्बार वन्दना कर सब उठे। राजा ने सुदर्शना आदि का शानदार प्रवेशोत्सव करवाया। दास-दासियों एवं सारी सामग्री युक्त बढ़िया महल सुदर्शना को दिया। शिलयवती भी सुदर्शना के साथ ही ठहरी। जरूरत पड़ने पर आने का कहकर ऋषभदेव सेठ ने विदा ली। सुदर्शना-शियलवती आदि ने स्नान-जिनपूजा, भोजन, विश्राम आदि में दिन पूर्ण किया। दिन भर सुदर्शना के दिल में उपदेश रमण करता रहा।

प्रतिक्रमण, पूजा, चैत्य-देववंदन, गुरु वंदन, व्याख्यान श्रवण, व्रत-नियम-पच्चक्खाण, साधर्मिकवात्सल्य, गुरुसेवा और सूत्र पाठ स्वाध्याय आदि में सुदर्शना-शियलवती के दिन आनन्द-उल्लास में बीतने लगे।

आयोधन नगर के महाराजा जयवर्मा परिवार सहित स्वयं शियलवती को लेने आये। इन्कार करते शियलवती ने कहा पिताजी! अब तो मेरी आत्मा धर्म में ही रम गई है। मैंने ब्रह्मचर्य व्रत भी स्वीकार कर लिया है फिर सुदर्शना जैसी सत्वशीलशाली आत्मार्थी युवती का साथ मिला है। यहां धर्म की सभी सुविधा और मेरे मामा ही राजा हैं, यहां के! और क्या चाहिये?

राजा ने काफी आग्रह किया किन्तु शियलवती इन्कार कर गयी। राजा जयवर्मा ने कहा अच्छा, अभी तो मैं जाता हूँ पर एक बार तुम दोनों को आयोधन नगर अवश्य आना होगा कह वे अपनी राजधानी की ओर चल दिये।

आज ज्ञानभानू गुरुजी अपनी अद्भुत धर्म देशना में मुक्ति की चर्चा कर रहे थे। राज परिवार, श्रेष्ठि परिवार, सुदर्शना शियलवती आदि अपार जनसमुदाय एकाग्र-उत्कंठित हो धर्म उपदेश सुन रहा था । वे कह रहे थे–

खाने के लिये दुर्लभ सुमधुर फल मिलते हो, रत्नजड़ी प्याली में स्वादिष्ट पेय पीने को मिलते हों, रानी राजकुमारियों का असीम प्यार बरसता हो, ममता और दुलार मिलते हों, पैरों में हीरे के पायल पहनाये गये हों, गले में मोती की माला चमकती हो, शीत-ताप-वर्षा आदि के भय का जहाँ जरासा अंदेशा भी न हो और रहने को रत्नों जड़ा सोने का सुन्दर पिंजड़ा हो, फिर भी तोते की नजर कहां होगी?

पिंजड़े की खिड़की पर, भगवन्?

क्यों?

इसलिये दयालु! कि किसी तरह ये खिड़की खुली अधखुली रह जाय तो यहां से उड़ जाऊं!!

इतनी खुशिया, सुख-सुविधा छोड़कर उड़ जाने से क्या मिलेगा तोते को?

उसे मुक्ति मिलेगी नाथ! मुक्ति।

सही कहते हो। मुक्ति के आनन्द का जिसे पता है वह कभी भी बन्धन में रहने को राजी नहीं होगा। उसे तो किसी भी कीमत पर छुटकारा चाहिये। जीव स्वयं आत्मा को उलझनों में डालता है–न मालुम किन किन फंदो में फांसता है। जितने सम्बन्ध हम बांधते हैं उतने ही बन्धन हो जाते हैं। तोता मुक्ति का अभिलाषी होता है अतः वह कहीं बंधता नहीं। किसी दिखती सुख सुविधा में आसक्त नहीं होता। मौका मिलते ही फट् से उड़ जाता है। लेकिन जानते हो कबूतर को। कैसे होते हैं उसके मिजाज और खयाल? अगर उसे उड़ा भी दिया तो सिर्फ थोड़े दानों के लिए वापस आ जाता है। सुविधा के लिए आजादी खोना और गुलामी पाना उसे कोई तकलीफदेह नहीं है। जो सोया है, जो अज्ञान में पड़ा है उसे अपना ही यता नहीं तो असलियत खोजने पाने की सोचेगा ही कैसें? जिसने स्वयं को जाना है–आत्मा को पहचाना, जो जाग चुका है, उसे पता है कि पराधीनता जैसा दुःख नहीं और स्वाधीनता जैसा सुख नहीं। कबूतर का अपना लक्ष्य है, तोते का अपना लक्ष्य है। अपना भी लक्ष्य मुक्ति का होना चाहिये। लक्ष्य होगा तो उसकी सिद्धि प्राप्ति भी अवश्य होगी ही।

धन्य हो प्रभु! यथार्थवाणी है। हमें मुक्ति ही चाहिये।

मुक्ति पाना हो तो उस मार्ग पर उतर जाओ जो मार्ग मुक्ति को ले जाता हो।

श्री सर्वज्ञ परमात्मा द्वारा प्रकाशित सिद्धान्त का बोध, बोध पर रुचि-निष्ठा और उसकी आत्मा में परिणति अर्थात् सद्नुसार आचार यही मोक्ष का मार्ग है।

ज्ञान और क्रिया के योग से मुक्ति मिलती है।

ज्ञान को पंगु और क्रिया को अन्धे की उपमा ज्ञानियों ने दी है। मानो किसी जंगल में आग लग गई। अब पंगु आंखों से देखते हुए भी जलता है-जल मरता है। अन्धा अपने मजबूत पैरों से बेतहाशा दौड़ता है, देख न सकने की वजह से आग में ही पड़ता है और जल जाता है।

एक के पास नैन न थे दूसरे के पास पैर न थे। यानी एक के पास ज्योतिःप्रकाश न था तो दूसरे को चलने कि क्रिया की क्षमता न थी। परन्तु

वे दोनों मिल जाये, मतलब अन्धे के कन्धे पर लंगड़ा बैठ जाय और अन्धे को रास्ता बताता रहे, वैसे अन्धा चलता रहे तो दोनों दावानल से पार उतर सकते हैं।

ये संसार जलता जंगल है। इसमें से सही सलामत बच निकलने के लिये पंगु-ज्ञान और अन्ध क्रिया का संगम अनिवार्य है।

ज्ञानहीन क्रिया सही दिशा नहीं बता सकती और क्रियाहीन ज्ञान कोई परिणाम पैदा नहीं कर पाता-कहीं भी पहुँचा नहीं पाता। हम चलते तो काफी है पर पहुँचते कहीं भी नहीं हैं।

काफी चलने पर भी बिना पते घर कैसे पहुँचोगे? पता जेब में रखकर पड़े रहोगे तो भी घर कैसे पहुँचोगे? आखिर पता तो स्वयं के घर का ही चाहिये, क्योंकि दूसरों के पते से अपने घर पहुँचने का कोई उपाय नहीं है।

अगर नहीं अमल तो इल्म के होने से क्या हाँसिल?

यूं तो किताबें लाद्‌दकर बहुत खच्चर निकलते हैं।

अर्थात् आचरण न हो, तो जानकारी का क्या फायदा? मात्र थोड़ रट लिया या पोथा पंडित हो भी गये, जीवन में तो कुछ पहुंचा नहीं, आत्मा तो कोरी ही रह गयी तो ज्ञान एक बोझा बन जाता है। कभी कभी तो बड़े अमूल्य और दुर्लभ पोथे खच्चर ढोते रहते हैं।

पुण्यवानो! मनुष्य का जीवन दुर्लभ और बहुत महंगा होते हुए भी कितना सीमित और अनिश्चित है। क्या पता कब कौन सा रोग आ घेरे? कौन जाने कैसी विपदा कब आ पड़े? जिंदगी का कोई भरोसा नहीं? वीतराग परमात्मा ने बार-बार फरमाया है कि कमल के पत्ते पर ठहरे जल बिंदु जैसा यह जीवन पता नहीं कब फिसल जाय। जरा सा पत्ता हिला कि पानी का कतरा गया। मामूली सा झटका लगा कि जीवन गया। चाहे कितना तन्दुरस्त और खूबसूरत बदन हो लेकिन उसका अनिवार्य-अपरिहार्य परिणाम है कि गलेगा-ढलेगा और गिर जायेगा। ऐसा गिरेगा कि अब खड़ा नहीं होगा। बहते पानी जैसी इस जवानी को बुढ़ापा पकड़े बैठा है। जो कभी छोड़ेगा नहीं। बुढ़ापा स्वयं पराधीनता का शिकार है, वह जहां तक दूर है वहां तक मुक्ति के लिए संसार सागर तैरने के लिये घोर पुरुषार्थ कर लेना ही समझदारी है।

हाथी के कान जैसी चंचल सम्पत्ति है। पैसा घर बदलता रहता है। यहाँ बड़े बड़े महारथी और धनपति आये और चल दिये लेकिन दौलत किसी के साथ ना गयी, ना जाने की।

जिनेश्वर परमात्मा संसार में सर्वश्रेष्ठ सुपात्र हैं इनसे उत्तम त्रिलोक में कोई भी नहीं है। हजारों वर्ष की तपस्या और उत्तम चर्या से जो फल महान् योगी पुरुष उपार्जित करते हैं वहीं फल उत्तम प्रकार से तीर्थंकर परमात्मा की भक्ति द्वारा गृहस्थ उपासक भी थोड़ी देर में प्राप्त कर लेता है। जिनेश्वर प्रभु सुपात्रों में भी श्रेष्ठ सुपात्र हैं - संसार की समस्त अच्छाइयों के मूल हैं। उनके जैसे दयालु करुणामूर्ति, समभावी, महाज्ञानी, उत्तम चारित्रवान् मोक्षमार्ग के नेता प्रणेता कोई भी नहीं है। अतः इनकी जितनी भी भक्ति की जाय थोड़ी है। इनके चरणों में जितना भी अर्पण किया जाय कम है। अतः जिनेश्वर प्रभु के महान मंदिरों भव्य प्रतिमाओं, उनके कल्याणक आदि की आराधना महोत्सव, पूजा, पूजन महास्नात्रिदि जीर्णोद्धार, तीर्थ यात्रा, संघ यात्रा, उद्यापन, रथ यात्रा आदि द्वारा हम अपनी सम्पत्ति का सद्व्यय कर सकते हैं। इससे यह अनुपम लाभ तो मिलेगा ही है, उपरान्त द्रव्य की आसक्ति-ममता पर अंकुश, पुण्यानुबन्धी पुण्य का बन्ध, श्री जिनशासन की प्रभावना और तीर्थंकर नाम कर्म का बंध भी हो सकता है। भवान्तर में धर्म की प्राप्ति सुलभ और आराधना सरल हो जाती है।

भगवान जिनेश्वरदेव के आगमों को उत्तम रीति से लिखवाने चाहिये, आगमों का आदर, सत्कार, सन्मान, पूजन, महोत्सव आदि करने चाहिये तथा उनकी सुलभता करनी चाहिये ताकि जीवों के कल्याण साधन की सुलभता हो, ज्ञानदान के प्रवाह को सदा गतिशील रखना चाहिये। ज्ञान ही प्रकाश है। ज्ञानदान का फल अक्षय है। ज्ञान से धर्म मार्ग और धर्म मार्ग से ही मुक्ति की प्राप्ति है।

जिनमंदिर, जिनमूर्ति, जिनागम की तरह ही पंचमहाव्रतधारी साधु साध्वी, श्रावक और श्राविका ये सात क्षेत्र कहलाते हैं। जिस प्रकार खेत में बोया हुआ अन्न प्रचुरमात्रा में उत्पन्न होता है वैसे ही इन सात क्षेत्र में से, जिस समय क्षेत्र को जरूरत हो उस वक्त उस क्षेत्र में धन व्यय करने से बोने से, अति मात्रा में फल निष्पन्न होते हैं।

सुदर्शना! तू पुण्यवती है। तेरे भाग्य बड़े और यशस्वी हैं। तेरी भावना भी पवित्र और ऊंची है। तू उदार और समृद्धिमान भी है। तुझे एक बहुत बड़ा लाभ मिल सकता है, जिससे तेरी कीर्ति मनुष्य और स्वर्गवासी देव देवी गाते सुनते सुनाते रहेंगे।

हाँ, प्रभो! आपकी कृपा होगी तो लाभ अवश्य मिलेगा ही।

हाँ सुदर्शना! सिंहलद्वीप से ही तेरी यह भावना थी कि एक अतिभव्य

सुन्दर जिनमंदिर बनवाना। तो यह भूमि तो अति उत्तम है। वर्तमान में जिनके शासन में हम अपना कल्याण मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं उन श्री मुनिसुव्रत भगवान ने अपने चरण कमलों से इस नगर की भूमि को अनेक बार पावन किया है। जहाँ देवों ने भगवान मुनिसुव्रतस्वामी का अति अद्‌भुत समवसरण बनाया था। वह जगह आज भी अश्वावबोध तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है। उसी जगह के उद्धार की आज जरूरत है। वहाँ अतिभव्य और रमणीय जिनालय बन जाये तो इस तीर्थ की भव्यता अनेक गुनी बढ़ सकती है।

हाँ भगवान! आपका चिन्तन हर तरह से बहुत उपयोगी हो। अश्वावबोध! वह क्या भगवान्। इसका क्या अर्थ होगा प्रभु?

सुदर्शना! यह एक ऐसा अद्‌भुत इतिहास है जो भगवान मुनिसुव्रत और अश्व से सम्बन्धित है। यह तीर्थ है और तीर्थ संसार से हमको तार देता है। देखो, बड़ी से बड़ी शक्ति भी यहाँ से चली जाती है। कभी तो धर्मशासन भी संकट में आ गिरता है। दुष्काल, युद्ध आदि के कारण उन उन क्षेत्र में गुरुओं का विहार भी बन्द हो जाता है। उनका समागम दुर्लभ हो जाता है। परन्तु ये जिनमंदिर युग युगान्तर तक जगत् को दिव्य सन्देश, पवित्र प्रेरणा, मौन रहकर भी धर्म का आघोष देते रहते हैं।

मंदिर बनवाने वाले भाग्यवान को महाशाता का बन्ध होता है। परभव में शीघ्र ही धर्म की प्राप्ति व सरलता से पालना होती है। परिणाम में वह अल्पकाल में संसार के बन्धनों का अन्त कर मुक्ति को पाने में सफल बनता है। यह इतिहास जिनमंदिर की महानता को लेकर बैठा है।

जी, प्रभु! यह महान इतिहास हमें भी सुनाने की कृपा करिये। हमें भी बड़ी जिज्ञासा व उत्कंठा है।

अवश्य, सावधान हो सुनिये।

भारतवर्ष के पूर्व अंचल में मगध नाम का समृद्ध देश है। गंगा नदी के निर्मल जल का प्रवाह वहाँ की धरती को सदा हरी-भरी रखता था। सृष्टि ने भी उदार हाथों से वहाँ अपना सौन्दर्य बिखेरा था। वहाँ का वैभव भी असाधारण अद्‌भुत था।

चारों ओर बड़े बड़े पर्वतों से वैष्टित समतल भूभाग पर परकोटा-परिखा से मंडित थी राजधानी, महानगरी राजगृही।

प्रचंड भुजदंड वाले सुमित्र नाम के राजा वहाँ राज्य करते थे। वे सदाचारी व शूर तो थे ही किन्तु धर्म कार्य में सदा अग्रणी रहते थे।

उस नगरी के उत्तुंग जिनमंदिर के शिखरों में लगे सुवर्ण कलशों में जब सूर्य प्रतिबिंबित होता, तब ऐसा लगता है मानो सारा सौर मण्डल-सूर्य का सारा परिवार यहाँ खेलने उतर आया हो। राजा के गृह जैसे ही अधिकतर वहाँ गृह होने के कारण वह नगरी राजगृही कहलाती थी।

पवित्रता की प्रतिमूर्ति जैसी महारानी पद्मावती मधुरभाषा, संतोषी, गुणवती और धर्मपरायण थी। उनके नाम से भी उपद्रव शांत हो जाते थे।

श्रावणी पूर्णिमा के रोज महारानी जी की कुक्षी में भगवान् श्री मुनिसुव्रतस्वामी का स्वर्ग से पधारना हुआ, तब देवों के राजाओं ने भी खुशियाँ मनायीं। कल्याण के निधान, कृपा के सागर प्रभु श्रीमुनिसुव्रतस्वामी का जन्म ज्येष्ठ वदी अष्टमी को हुआ। सारी सृष्टि प्रमुदित हो उठी। मंद-सुगंधी पवन ने धरती आकाश को आह्लाद से भर दिया। दिशा कुमारियों ने मिलकर जन्म संस्कार की रस्म अदा की। भगवान, उनके कुल व माता-पिता के गुण गाये। हर्ष विभोर हो शुभ कामनाएं व्यक्त की।

इन्द्र महाराज ने सुघोष महाघंट बजवाया, देवों को तीर्थ नदी महासरोवर और क्षीरसागर से पवित्र जल उत्तम सुगन्धी पदार्थ, वनस्पति, पुष्प आदि लाने की सूचना दी और मेरुपर्वत पर सब को समय पर आ जाने का मधुर आमंत्रण दिया। इन्द्र इन्द्राणी, देव-देवियों के समूह ने मेरूपर्वत पर प्रभु का जन्माभिषेक किया। भक्ति के प्रकर्ष से प्रभु के गुण-गीत गाये। भाव-विभोर हो नृत्य किया। यों प्रभुजी के जन्मकाल तो आनन्दोत्सव से मनाया और मिले अनमोल अवसर को सफल किया। प्रभु जी को माता के पास रख, महल में सोना-चांदी, रत्न, मणि और पुष्पादिक की वृष्टि कर नंदीश्वर द्वीप गये और वहाँ अष्टान्हिका महामहोत्सव कर स्वर्ग में गये।

राजपरिवार ने भगवान का मुनिसुव्रत नाम रखा। दूज के चांद की तरह बढ़ते उनका योग्य समय में राज्याभिषेक हुआ। प्रभु ने कौशल से राज्य व्यवस्था सम्भाली और न्याय नीति से प्रजा का पालन किया।

वर्ष भर (वर्षीदान) देकर वैभव, महल, सुख-सुविधा और परिवार का त्याग कर फाल्गुन सुदी बारस को देव-देवेन्द्र मनुष्य आदि के महाहर्षनाद और महामहोत्सव पूर्वक प्रभु ने दीक्षा स्वीकार की और आत्मसाधना में ओतप्रोत हो गये।

प्रबल पुरुषार्थ और गहरी समझ से धीर, वीर, गम्भीर परमात्मा ने आत्मा की एक एक कमी को एक एक शत्रुओं को चुन चुनकर निकाल दूर किया।

घाती कर्मों का नाश किया और ज्ञान की दिव्य ज्योति जगमगा उठी। प्रभु ने अन्तर शत्रुओं को जीत लिया वे जेता विजेता बने। जिन बने। महासुदी बारस को प्रभु केवलज्ञानी बने। समस्त लोक-अलोक को आलोकित करने लगे। प्रभु का ज्ञान विश्व और काल की सीमा लांघ गया। देवों ने केवलज्ञान कल्याणक की महिमा गाई और मनाई। समवसरण की रचना की। प्रभुजी बिराजे और जगत के जीवों को सद्धर्म का उपदेश दिया। तीर्थ की स्थापना की। निरन्तर पृथ्वी पर विचरण कर अनेक आत्माओं को मोह की पकड़ से छुड़ाया, सन्मार्ग पर चढ़ाया और मोक्ष तक पहुंचाया।

प्रभु दक्षिण में विचर रहे थे। एक बार प्रतिष्ठानपुर पधारे। घर घर में धर्म का प्रभाव पहुंच गया।

परमात्मा ने अपने ज्ञान में पूर्वभव के मित्र को देखा, जो इस भव में भृगुकच्छ के महाराजा का पट्टअश्व बना था। हाँ, घोड़ा बना था। उसे कुछ ही वक्त में अपनी आयु पूर्ण करने वाला और उपदेश के योग्य जाना। दया के सागर भगवान उसके उद्धार के लिए एक ही रात्रि में साठ योजन का विहार कर भृगुकच्छ में पधारे। मनुष्य और देवों ने जयजयकार कर आसमान को भर दिया। सुवर्ण चांदी और रत्नोमय अपूर्व समवसरण की रचना की। प्रभुजी के पदार्पण की बात सारे शहर में फैल गयी। चारों दिशाओं में से नर-नारियों के समूह आने और आसमान से देव-देवियों के झुंड़ उतरने लगे। नगर के महाराजा जितशत्रु भी अपने प्रधान-पट्टअश्व पर बैठकर मय सवारी के साथ सपरिवार आये। तीन प्रदक्षिणा देकर भक्ति युक्त वन्दना कर प्रभुजी की अमोघ देशना सुनने उचित स्थान में विधिपूर्वण बैठे।

सजलमेघ जैसी गम्भीर ध्वनि में प्रभु ने धर्म देशना का शुभारम्भ किया और कहा—

जो कारिज्जइ जिणहरं, जिणाण जियरागदोसमोहाणं।
सो पावेइ अन्न भवे, सुलहं धम्मवररयणं ।।१

अर्थात् राग-द्वेष व मोह को जीतने वाले भगवान जिनेश्वर देवों के मंदिरों का निर्माण जो पुण्यवान करवाता है वह अन्य भव में बड़ी सरलता से धर्म पाता है और धर्म पालन करने में भी सफल बनता है।

कल्याणमय धर्म के द्वारा शीघ्र ही कर्मों की जंजीरों को तोड़ मुक्ति को पा जाता है। हमेशा हमेशा के लिये उसके दुःख संकट जन्म-मरण टल जाते हैं।

तीर्थंकर परमात्मा की वाणी संसार की श्रेष्ठ वाणी है। प्रभु की प्रवचन

शक्ति का सामर्थ्य असीम व अद्‌भुत होता है। उनके अतिशयशाली प्रवचनों को चारों ओर एक एक योजन में रहे सभी प्राणी अपनी अपनी भाषा में सुनते और समझते हैं, न केवल देवता या मनुष्य ही किन्तु पशु और पक्षी भी।

श्री जिनमंदिर के निर्माता को अन्य भव में धर्म रूप श्रेष्ठ रत्न की प्राप्ति सुलभ होती है।

प्रभुजी के इन शब्दों को सुनकर राजा का पट्ट अश्व विचार में पड़ा। अति परिचित इन शब्दों का बार बार चिन्तन करने लगा। कहां सुने हैं? कब सुने हैं? सुने तो हैं ही और वह चिन्तन की गहराई में उतर कर धारणा को जगाने लगा। अतीत के विस्मरणों को दूर करते ही स्मृति सतेज हुई। परिणामतः जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न हुआ। उसके रोम रोम हर्षित हो उठे। आंखों से आनन्द उभरने लगा। उससे रहा नहीं गया। वह खड़ा हो मारे खुशी के हिन हिनाने लगा। वह स्फूर्ति से समवसरण की सीढ़ियां चढ़ गया और देव-मनुष्यों के बीच से निकल निर्भय निःशंक हो प्रभुजी के समक्ष आ खड़ा हुआ। अति उत्कंट भाव पूर्वक नमन करते उसने तीन प्रदक्षिणा दी। फिर खड़े हो बार बार वन्दना करने लगा। उसका आनन्द मानो उभर कर बाहर आ रहा था। अपने आनन्द को व्यक्त करने का और तो कोई उपाय नहीं था। वह कुछ बोल भी नहीं सकता था। वह अपने अगले पैरों की खुर से जमीन खोदने की सी चेष्टा कर आनन्द जताने लगा।

क्रमश :

JAIN BHAWAN PUBLICATIONS

P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone: 2268 2655

English :

1. Bhagavati-sutra-Text edited with English translation by K. C. Lalwani in 4 volumes:

Vol - 1	(satakas 1- 2)	Price : Rs.	150.00
Vol - 2	(satakas 3- 6)		150.00
Vol - 3	(satakas 7- 8)		150.00
Vol - 4	(satakas 9- 11)		150.00

2. James Burges - The Temples of Satrunjaya. Jain Bhawan. Kolkata ; 1977. pp. x+82 with 45 plates — Price : Rs. 100.00
   (It is the glorification of the sacred mountain Satrunjaya.)
3. P. C. Samsukha - Essence of Jainism translated by Ganesh Lalwani. — Price : Rs. 15.00
4. Ganesh Lalwani - Thus Sayeth Our Lord, — Price : Rs. 15.00
5. Verses from Cidananda Translated by Ganesh Lalwani — Price : Rs. 15.00
6. Ganesh Lalwani - Jainthology — Price : Rs. 100.00
7. Lalwani and S. R. Banerjee- Weber's Sacred Literature of the Jains — Price : Rs. 100.00
8. Prof. S. R. Banerjee Jainism in Different States of India — Price : Rs. 100.00
9. Prof. S. R. Banerjee Introducing Jainism — Price : Rs.
10. Smt. Lata Bothra- The Harmony Within — Price : Rs. 100.00
11. Smt. Lata Bothra- From Vardhamana- to Mahavira — Price : Rs. 100.00

Hindi :

1. Ganesh Lalwani - Atimukta (2nd edn) Translated by Shrimati Rajkumari Begani — Price : Rs. 40.00
2. Ganesh Lalwani - Sraman Samskriti Ki Kavita, Translated by Shrimati Rajkumari Begani — Price : Rs. 20.00
3. Ganesh Lalwani - Nilanjana, Translated by Shrimati Rajkumari Begani — Price : Rs. 30.00
4. Ganesh Lalwani - Chandan-Murti Translated by Shrimati Rajkumari BeganiPrice : Rs. 50.00
5. Ganesh Lalwani-Vardhaman Mahavira — Price : Rs. 60.00

6.	Ganesh Lalwani-Barsat ki Ek Raat,	Price : Rs.	45.00
7.	Ganesh Lalwani -- Panchdasi.	Price : Rs.	100.00
8.	Rajkumari Begani-Yado ke Aine me.	Price : Rs.	30.00
9.	Dr. Lata Bothra - Bhagavan Mahavira Aur Prajatantra	Price : Rs.	15.00
10.	Dr. Lata Bothra - Sanskriti Ka Adi Shrote, Jain Dharm	Price : Rs.	24.00
11.	Prof. S.R. Banerjee - Prakrit Vyakarana Praveshika	Price : Rs.	20.00
12.	Dr. Lata Bothra - Adinath Risabdev Aur Asthapad	Price : Rs.	250.00

Bengali :

1.	Ganesh Lalwani-Atimukta,	Price : Rs.	40.00
2.	Ganesh Lalwani-Sraman Sanskriti ki Kavita	Price : Rs.	20.00
3.	Puran Chand Shymsukha-Bhagavan Mahavir O Jaina Dharma.	Price : Rs.	15.00
4.	Prof. Satya Ranjan Banerjee Prasnottare Jaina-Dharma	Price : Rs.	20.00
5.	Dr. Jagatram Bhattacharya Das Baikalik Sutra	Price : Rs.	25.00
6.	Prof. Satya Ranjan Banerjee Mahavir Kathamrita	Price : Rs.	20.00
7.	Sri Yudhishthir Majhi Sarak Sanskriti O Puruliar Purakirti	Price : Rs.	20.00

Some Other Publications

1.	Dr. Lata Bothra - Vardhamana Kaise Bane Mahavir	Price : Rs.	15.00
2.	Dr. Lata Bothra - Kesar Kyari Me Mahakta Jain Darshan	Price : Rs.	10.00
3.	Dr. Lata Bothra - Bharat Me Jain Dharma	Price : Rs.	100.00
4.	Acharya Nanesh - Samata Darshan Aur Vyavhar (Bengali)	Price : Rs.	
5.	Shri Suyesh Muniji - Jain Dharma Aur Shasnavali (Bengali)	Price : Rs.	50.00
6.	K.C.Lalwani - Sraman Bhagwan Mahavira	Price : Rs.	25.00

NAHAR
5B, Indian Mirror Street, Kolkata - 700 013
Phone: 2227- 5245/5240, Resi: 2246-7757

M/S. BOYD SMITHS PVT. LTD.
8, Netaji Subhas Road, B-3/5 Gillander House,
Kolkata - 700 001, Ph: (O) 2230-8105/2139,

KUMAR CHANDRA SINGH DUDHORIA
7, Camac Street, Kolkata - 700 017, Ph: 2282-5234/0329

M/S. METROPOLITAN BOOK COMPANY
93, Park Street, Kolkata - 700 016, Ph: 2226-2418,

M/S. SURANA MOTORS PVT. LTD.
84 Parijat, 8th Floor, 24A, Shakespeare Sarani
Kolkata - 700 071, Ph: 2247-7450, 2283-4662

SUDIP KUMAR SINGH DUDHORIA
"Indian Silk House Agencies"
129, Rasbehari Avenue, Kolkata- 700 029, Ph: (S) 2464-1186

ASHOK KUMAR RAIDANI
6, Temple Street, Kolkata - 700 072, Ph: 2237-4132, 2236-2072

IN THE MEMORY OF **SOHANRAJ VINAYMATI SINGHVI**
30B, New Road, Alipore, RBI, Staff Quarter &
Gadges Road (Inside lane) Kolkata - 700 027

M/S. GLOBE TRAVELS
11, Ho Chi Minh Sarani, Kolkata - 700 071, Ph: (O) 2282-8181-4/8780

DR. K.B. SINGH (M.B.B.S.)
67, S.N. Pandit Road, Kolkata - 700 025
Ph: 2455-2081, 2454-7127, Chember- 2268-8670/4207

M/S. LALCHAND DHARAMCHAND
12, India Exchange Place, Kolkata-700 001, Ph: 2230-2074/8958, 2230-3187

SUVGYA BOYED
340, Mill Road, Apt. # 1407, Etobicolse, Onterio m9 Cly8, 416-622-5583

M/S. COMPUTER EXCHANGE
Park Centre' 24 Park Street, Kolkata - 700 016, Ph: 2229-5047

SUNDERLAL DUGAR
8/1 Lal Bazar Street, Kolkata - 700 001, Ph: 2248-5146/6941/3350,

M/S. ARBEITS INDIA
8/1, Middleton Road, 8th Floor, Room No.4,
Kolkata - 700 071, Ph: 2229 6256/8730/1029

SAROJ DUGAR
34/1J, Ballygunge Circular Road, Kolkata - 700 019, Ph: 2475 1458

M/S. VEEKEY ELECTRONICS
29/1B, Chandni Chowk, 3rd floor, Kolkata - 700 013, Ph: 2237-6255

M/S. KRISHNA JUTE COMPANY
9, India Exchange Place, Kolkata - 700 001,Ph: 2230-0871/9372, 3022937172

M/S. ELECTO PLASTIC PRODUCTS PVT. LTD.
22, Rabindra Sarani, Kolkata - 700073, Phone: 2236-3028, 2237-4039

BHEEKAM CHAND DEEP CHAND BHURA
2, Clive Ghat Street, Kolkata - 700 001, Phone : 2220-5229/5121

M/S. MOUJIRAM PANNALAL
45, Armenian Street, Kolkata - 700 001, Ph : 3288-8088/2248-8086,

M/S. ROYAL TOUCH OVERSEAS CORPORATION
47, Pandit Purushottam Roy Street, 2nd Floor,
Kolkata - 700 007, Phone : (033)2270-1329, 2272-1033

M/S. NAKODA METAL
32A Braboume Road, Kolkata - 700 001, Ph: 2235-2076, 2235-5701

M/S. MUSICAL FILMS (P) LTD
9A, Esplanade East, Kolkata - 700 069,
PH: 2248 0229/7030/2920/4346

M/S. SAGAR MAL SURESH KUMAR
187, Rabindra Sarani, Kolkata - 700 007, Ph: 2273-1766, 2268-8846

DR. NARENDRA L. PARSON & RITA PARSON
18531 Valley Drive, Villa Park, California 92667 U.S.A.
Phone : 714-998-1447714998-2726,

V.S. JAIN
Royal Gems INC.632 Vine Street, Suit # 421
Cincinnati OH 45202Phone : 1-800-627-6339

RAJIB DOOGAR
305, East Tomaras Avenue, Savoy, IL 61874-9495, USA
Ph : 001-217-355-0174/0187, e-mail : doogar@uiuc.edu

SMT. KUSUM KUMARI DOOGAR
Amil Khata, P.O. Jiaganj, Dist: Murshidabad, Pin- 742123
West Bengal, Phone: 03483-56896

M/S. SETHIA OIL INDUSTRIES LTD.
Lucknow Road, PO. Sitapur-261001 (U.P.), Phone: 05862/42017/42073

M/S. BEEKAY VANIJYA PVT. LTD.
City Centre, 19, Synagogue Street, 5th Floor, Room No. 534-535,
Kolkata - 700 001, Phone: 2210-3239, 2210-3253

RANJIT SINGHI
P15, New C.I.T. Road, Kolkata - 700 073

जो हिंसात्मक प्रवृत्ति से विलग है, वही बुद्ध, ज्ञानी हैं
WITH BEST WISHES

DEEPAK KUMAR SANDEEP KUMAR NAHATA
63A, Burtolla Street, Kolkata - 700 007, Phone: (G) 2268-0900

In the Sweet Memory of my mother, LATE SOVABOTI DUSAJ
Manilal Rajendra Kumar Dusaj
Mobil : 9331041011, 9830142192

In the memory of Badindrapat Singhji Dugar
GAUTAM DUGAR
34/1/K, Ballygunge Circular Road, Kalkata - 700 019,
Ph: (2475-1109/6835

M/s. MUKUND JEWELLERS
P-37A, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Ph: 2272-3876

KAMAL SINGH KARNAWAT
7,Khelat Ghosh Lane, Kolkata - 700 006, Ph: 2259-3885,

RATAN LAL DUNGARIA
16B, Ashutosh Mukherjee Road, Kolkata - 700 020, Ph: 2455-3586

M/S. PARSON BROTHERS
18B, Sukeas Lane, Kolkata - 700 001, Phone: 2242-3870

M/S. INDUSTRIAL PUMPS & MOTOR AGENCIES
40, Strand Road, 4th Floor, R.N.3, Kolkata - 700 001

M/S. M.L. CHOPRA & CO.
12-B, N. S. Road; Kolkata - 1, PH : 2230 5059 / 2230 1130,

M/S. STEELUX INDIA; CIVIL CONTACTORS
13/5, Hazi Jakaria Lane, Kolkata - 700 006

SHIV KUMAR JAIN
27A, Camac Street, Kolkata - 700 016, Ph: (O) 2287-7880, 2287-8663,

MAHENDRA TATER
45/4A, Chakraberia Road (S)Kolkata - 700 025

M/S. SARAT CHATTERJEE& CO. (VSP) PVT. LTD.
Regd Office 2, Clive Ghat Street, (N. C. Dutta Sarani)
2nd Floor, Room No. 10, Kolkata - 1, Ph: 2230-7162, 2231-5540,

TAPAN KUMAR SAHELA
Shiv Bhawan, Police Line Road, Bhagalpur - 812001,
Ph: 0641-2421091, 2301041

APARAJITA BOYED
9/10, Sitanath Bose Lane, Salkia, Howrah - 711 106,
Ph: 2665-3666/2272

SHRI JAIN SWETAMBER SEVA SAMITI
13, Narayan Prasad Babu Lane, Kolkata - 700 007, Ph: 2269-1408

M/S. BADALIA GEMS PVT. LTD.
66/3, Beadon Street, Kolkata - 700 006, Ph: 2554-8999/8997

M/S. CREATIVE
12, Dargah Road, Post Box 16127, Kolkata - 700 017
Ph: 2240 3758 / 2287-3450/3758, 2281-1690, 2290-0514/3450

जो एक को जानता है, वह सबको जानता है और
जो सबको जानता है वह एक को जानता है।

WITH BEST WISHES

M/S. CALTRONIX
12 India Exchange Place, 3rd Floor, Kolkata - 700 001,
Ph: 2230 1958/4110

PABITRA KUMAR DOOGAR
Amil Khata, P.O. Jiaganj, Dist: Murshidabad, Pin- 742123
West Bengal, Phone: 03483-256896

WITH BEST WISHES
22, Strand Road, 2nd Floor, Kolkata - 700 001, Phone : 22131484

BIKASH CHHAJER
M/S. SITAL GROUP OF COMPANIES
'Centre Point', 21, Hemanta Basu Sarani
2nd Floor, Room No. 226, Kolkata - 700 001, Ph: 2242-9265, 2210-9228,

KESARIA & CO.
2, Lal Bazar Street, Todi Chambers, 5th Floor
Kolkata - 700 001, Ph: (O) 2248-8576/0669/1242

ARIHANT JEWELLERS
M/s. B.B. Enterprises
24 Ray Street, 2nd Floor, Kolkata - Ph: 3258-2284/9331030188

MANIK JAIN (Philatelic & numismatic)
One Moti Sil Street, Kolkata - 700 013
2228 8549, 2228 7777, Tele Fax : 2228 8888

In the memory of our father Late Surendra Singh Baid
SHRI HIREDRA SINGH BOYED
15/A, Chakraberia Road, Kolkata - 700 020 (M) 9831000458
SHRI RABINDRA SINGH BOYED (9231575198)
SHRI GYANENDRA SINGH BOYED (2363-1966)

TARUN TEXTILES (P) LTD.
203/1, Mahatma Gandhi Road, Kolkata - 700 007,
Ph: 2268-8677, 2269-6097

MAHENDRA RAJ MEHTA
8, Brajadulal Street, Kolkata - 700 006, (M) : 9903052310

SHANTIPAL BHANSALI
23, N.S. Road 7th Floor Room No. 24, Ph: 2242 8633, (M) 9331023735

THE PRINCE OPTICAL CO.
72, Canning Street, Kolkata - 700 007, Ph : 2235 5544, 3022 0533

M/S. GEETA CATERERS
17M/1, Dover Terace, Kolkata - 700 019, Ph : 2461 8329, 9830051068

MOHANLAL JAIN & SONS.
9 India Exchange Place, Kolkata - 700 001, Ph: 2230 8255, 2230 8528

M/S. KESAVLAL MEHTA & COMPANY
154, Tarak Pramanik Road, Kolkata - 700 006, Ph: 2241 1163 (O)
48/33, Swiss Park, Kolkata - Ph: 3243 6469 (R)

M/S. TREND BYABAAR LTD.
Unit : Telbin Jute Mills, 24, N.S. Road, Kolkata - 700 001, Ph: 2231 2970/71/72 (O)

M/S. ROHINY PRINTERS
19/1B, Creek Row, Kolkata - 700 014, Ph: 2246 4610 (Press)
2216 5983, 2227 6510, 2446 4488

ज्ञानी के ज्ञान का सार यही है कि वह
किसी भी प्राणी की हिंसा नहीं करे।
अहिंसा और समता—यहीं शाश्वत धर्म है।
इसे समझे।

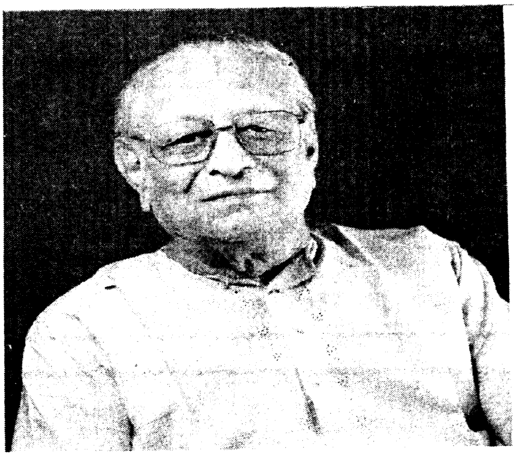

In the memory of my father

Late

Kantilal Srimal

Rabindra Srimal

Club Town
Block - 9 , Teghoria, VIP Road
Kolkata - 700 052
Phone : 2573 2152 / 2569 0230

शान्ति और समता के लिए न्याय-नीतिपूर्वक
धर्म का आचरण ही श्रेयस्कर है।

M/S. B.W.M. INTERNATIONAL
&
BIKANER WOOLLEN MILLS

4, Srinath Katara, Main Road,
Bhadohi, Pin : 221 401 (U.P.)
Ph: (05414) 225178, 225778, (0151) 2522404, 2225400,

With Best Wishes

M/S.SURANA WOOLEN PVT. LTD.

67-A, Industrial Area, Rani Bazar,
Bikaner - 334 001 (India)
Phone : 22549302, 22544163 Mills,
22201962, 22545065 Resi

With Best Wishes

M/S. WATERTECH ENGINEERS PVT. LTD.

ENVIRONMENTAL ENGINEERS & CONSULTANTS

1A, Raja Subodh Mullick Squre,
2nd Floor, Kolkata - 700 013
Phone : (033) 2237-5449, 2236-1229, 2221-9893, 2225-5346
Fax : 91-33-2221-9893, 91-33-2245-6558
e-mail : watertec@cal3.vsnl.net.in
Website : www.watertechengineers. com

BRANCH OFFICE : D - 110, NIRMAL MARKET,
POWER HOUSE ROAD

ROURKELA - 769001, **ORISSA,**
TELEFAX : (0661) 2507352

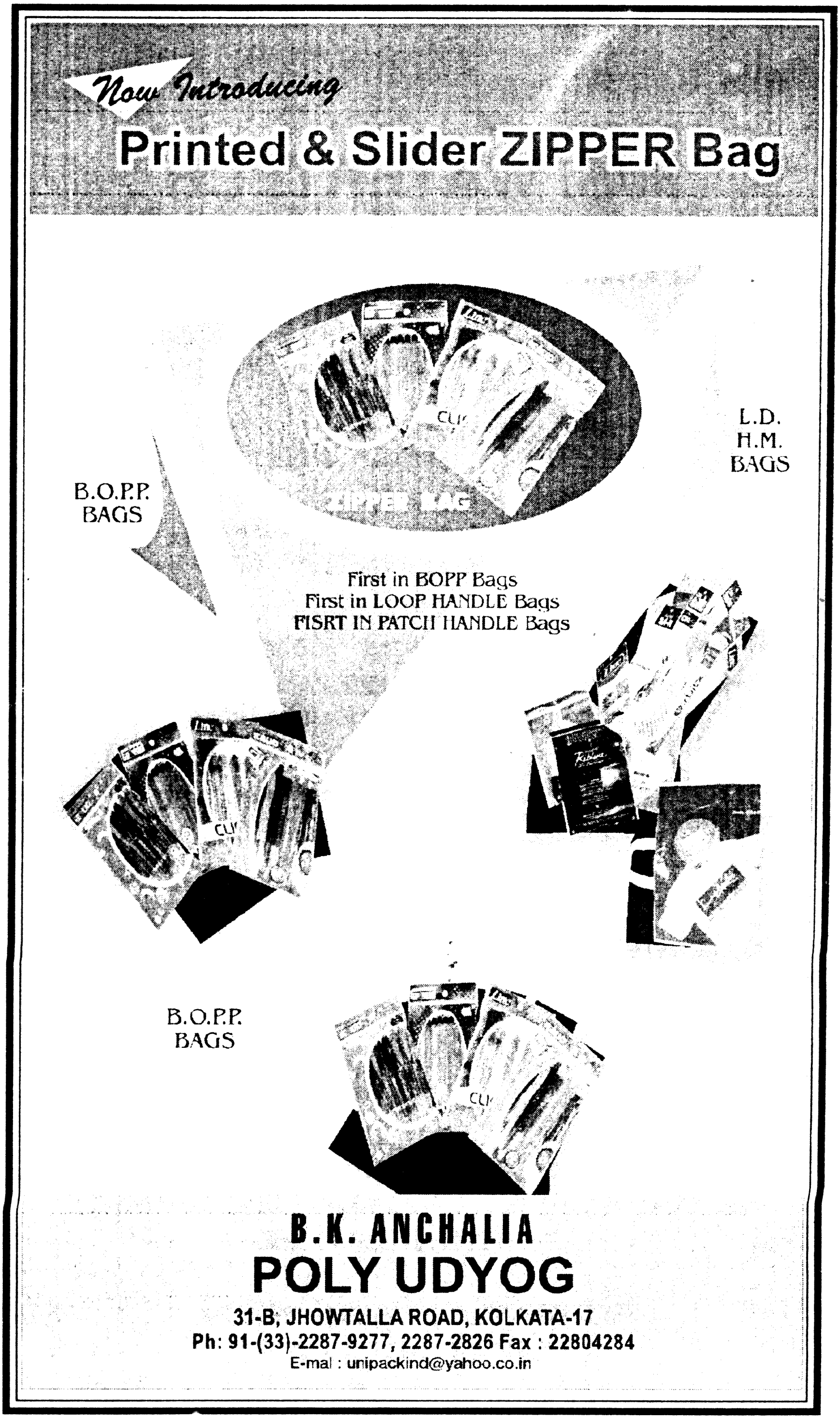
Now Introducing
Printed & Slider ZIPPER Bag
ZIPPER BAG
L.D.
H.M.
BAGS
B.O.P.P.
BAGS
First in BOPP Bags
First in LOOP HANDLE Bags
FISRT IN PATCH HANDLE Bags
B.O.P.P.
BAGS
B.K. ANCHALIA
POLY UDYOG
31-B, JHOWTALLA ROAD, KOLKATA-17
Ph: 91-(33)-2287-9277, 2287-2826 Fax : 22804284
E-mal : unipackind@yahoo.co.in

ऐसा विश्वास दिल में जमाते चलो
सिद्ध, अरिहन्त को मन में रमाते चलो,
वक्त आयेगा ऐसा कभी न कभी
सिद्धि पायेंगे हम भी कभी न कभी।

KUSUM CHANACHUR

Founder : Late. Sikhar Chand Churoria

Kusum
QUALITY PRODUCT

Our Quality Product of :

Anusandhan
Kolkata Nasta
Badsha Khan
Picnic
Raja
Shubham
Bhaonagari Ghantia
Jocker
Lajawab
Papri Ghantia
Rim Jhim
Tinku

MANUFACTURED BY

M/s. K. K. Food Product
Prop. Anil Kumar, Sunil Kumar Churoria
P. O. Azimganj, Dist: Murshidabad
Pin No.- 742122, West Bengal
Phone No.: 03483-253232,
Fax No.: 03483-253566

KOLKATA ADDRESS:

36, Maharshi Debendra Road, 3rd Floor Room No.- 308
Kolkata - 700 006, Phone No.: 2259-6990, 3293-2081
Fax No.: 033-2259-6989, (M) 9830423668

शस्त्र हिंसा एक से एक बढ़कर है।
किन्तु अशस्त्र अहिंसा से बढ़कर कोई शस्त्र नहीं।
अर्थात् अहिंसा से बढ़कर कोई साधना नहीं है।

THE GANGES MANUFACTURING COMPANY LIMITED

Chatterjee International Centre
33A, Jawaharlal Nehru Road,
6th Floor, Flat No. A-1
Kolkata - 700 071

Phone:

Gram "GANGJUTMIL"
Fax: + 91-33-245-7591
Telex: 021-2101 GANG IN

2226-0881
2226-0883
2226-6283
2226-6953

Mill

BANSBERIA

Dist: HOOGHLY
Pin-712 502
Phone: 2634-6441/2644-6442
Fax: 2634 6287

जैन मत तब से प्रचलित है
जबसे संसार में सृष्टि का आरम्भ हुआ।
मुझे इसमें किसी भी प्रकार की आपत्ति नहीं है
कि जैन धर्म वैदान्तिक दर्शनों से पूर्व का हैं।

Dr. Satish Chandra
Principal Sanskrit College, Kolkata

Estd. Quality Since 1940

BHANSALI

Quality. Innovation. Reliability

BHANSALI UDYOG PVT. LTD.

(Formerly: Laxman Singh Jariwala)

Balwant Jain - Chairman

A - 42, Mayapuri, Phase - 1, New Delhi - 110 064
Phone: 28114496, 28115086, 28115203
Fax: 28116184
e-mail: bhansali@mantraonline.com

शुभ कामनाओं सहित —

मनुष्य जीवन में ही सत्य कार्य करने का अवसर उपलब्ध होता है।

अहिंसा अमृत है, हिंसा विष है।

शुभचिंतक

PICK UP ALL U WANT UNDER ONE ROOF

▶▶ Groceries ▶▶ Edible Oils ▶▶ Personal Care ▶▶ Imported Pastas, Chocolates, Sauces, Gift Items, etc. ▶▶ Hygiene ▶▶ Baby Care ▶▶ Stationery ▶▶ other Household Items

Stop 2 Shop

AT YOUR COMPLETE SUPERMARKET

NAHAR PARK
45/4A, Chakraberia Road (S), Kolkata - 700025
(Near Jadu Babu's Bazar)
Phone: 24544696

Store Timings : 7.00 am to 9.00 pm
All days open except Thursday

FREE HOME DELIVERY

All Prices BELOW M.R.P.

PARKING AVAILABLE

28 water supply schemes
315,000 metres of pipelines
110,000 kilowatts of pumping stations
180,000 million litres of treated water
13,000 kilowatts of hydel power plants

(And in place where Columbus would have feared to tread)

SPML
Engineering Life

SUBHASH PROJECTS & MARKETING LIMITED

22, Camac Street, Pantaloons Building
Block-A, 3rd Floor, Kolkata - 700 017, Tel : 40091234/40091200
Fax : 40091303, e-mail : info@subhash.com., website : www.spml.co.in

Head Office: 113 Park Street, 3rd floor, South Block, Kolkata-700016 Ph:(033)2229-8228.
Registered Office: Subhash House, F-27/2 Okhla Industrial area, Phase II New Delhi-110 020
Ph: (011) 692 7091-94, Fax (011) 684 6003. Regional Office: 8/2 Ulsoor Road,
Bangalore 560-042 Ph: (080) 559 5508-15, Fax: (080) 559-5580.

Laying pipelines across one of the nation's driest region, braving temparature of 50° C.

Executing the entire water intake and water carrier system including treatment and allied civil works for the mammoth Bakreswar Thermal Power Project.

Bulling the water supply, fire fighting and effluent disposal system with deep pump houses in the waterlogged seashore of Paradip.

Creating the highest head-water supply scheme in a single pumping station in the world at Lunglei in Mizoram-at 880 metres, no less.

Building a floating pumping station on the fierce Brahmaputra.

Ascending 11,000 feet in snow laden Arunachal Pradesh to create an all powerful hydro-electric plant.

Delivering the impossible, on time and perfectly is the hallmark of Subhash Projects and Marketing Limited. Add to that our credo of when you dare, then alone you do. Resulting in a string of acheivements. Under the most arduous of conditions. Fulfilling the most unlikely of dreams.

Using the most advanced technology and equipment, we are known for our innovative solution. Coupled with the financial strength to back our guarantees.

Be it engineering design. Construction work or construction management. Be it environmental, infrastructural, civil and power projects. The truth is we design, build, operate and maintain with equal skill. Moreover, we follow the foolproof Engineering, Procurement and Construction System. Simply put, we are a single point responsibility. A one stop shop.

So, next time, somebody suggests that deserts by definition connote dryness, you recommend he visit us for a lesson in reality.

With Best Compliments

B.C. JAIN JEWELLERS
Since 1926

B.C. JAIN JEWELLERS PVT. LTD.

22, Camac Street
3rd floor, Block-A
Kolkata - 700 007
Phone: 2283 6203 / 6204 / 0056
Fax : 2283 6643
Resi : 2358 6901, 2359 5054

TITTHAYARA
Vol XXXI. No. 5
25th August 07

Registered
No. SSRM/KOL./RMS/WB/ RNP - 070/2007-09
R.N.I. 30181/77

ज्ञानी वही है जो किसी भी प्राणी की हिंसा न करें। सभी जीव जीना चाहते है मरना कोई नहीं चाहता अतः संसार के त्रस और स्थावर सभी प्राणियों को जाने या अनजाने में न मारना चाहिये, न दूसरों से मरवाना चाहिये, ना ही मन वचन काया से किसी को पीड़ा पहुँचाना चाहिये।

Kamal Singh Rampuria
Rampuria Mansions

17/3, Mukhram Kanoria Road, Howrah
Phone No. : 2666-7212/7225